परम्परा और आधुनिकता बोध: चरित्रों के विशेष संदर्भ में

नाटकों में तथ्यों और विचारों के मूल संवाहक पत्र ही हों जिनके आधार पर नाटकों
की मूल संबंधना और उद्देश्य को स्पष्ट किया जाता है। पात्रों के आचार — विचार,
क्रिया—प्रतिक्रिया का सजीव तथा यथार्थ अंकन ही किसी रचना को सफल तथा उद्देश्यपूर्ण
कृति बनाने में सफल होता है। वस्तुः किसी नाटक की सफलता इसी बात में है कि नाटककार
जो कुछ कहना चाहे उसे पात्रों में आरोपण करके ही कहें और इस प्रकार पात्र नाटककार के
जीवन संबंधी दृष्टिकोण को दृष्टांत रूप बना दे। पात्रों के माध्यम से ही वह अपना जीवन दर्शन
उपस्थित करें।

किसी भी रचना में पात्र का कोई निजी अस्तित्व नहीं होता है। वह कृतिकार के
दृष्टिकोण का प्रतिरूप होता है। नाटककार कथानक और घटनाओं के अनुरूप ही पात्रों का
निर्माण करता है। पात्रों के कार्यकलाप, संघर्ष तथा अन्तर्हृद, आचार—विचार, रूचि—अरूचि,
गुण—अवगुण, स्वभाव, संस्कार तथा मनोभावों के माध्यम से उनकी विशेषताओं को स्पष्ट करता
है। इन विशेषताओं के माध्यम से ही नाटककार की मूल संबंधना स्पष्ट होती है।

इस दृष्टिकोण से भी सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों के पात्रों की विशेषताओं के विश्लेषण के
आधार पर स्वच्छ नाटककार तथा नाटकों की मूल संबंधना तथा उद्देश्य को स्पष्ट करना
आवश्यक है। वस्तुः सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों के पात्र परम्परा और आधुनिकता—बोध के
धरातल पर दर्शायमान जीवन जीते हैं। वे एक तरफ परम्परा से जुड़ते हैं तथा दूसरी तरफ
आधुनिकता—बोध उनके भविष्य में शामिल है। यही हमें इन पात्रों की विशेषता है।

इस अध्याय का प्रमुख विषय पात्रों के माध्यम से परम्परा और आधुनिकता को दिखाना
है। अर्थात् किस प्रकार परम्परा का निर्वाह किया है और उनमें कहीं आधुनिकताबोध को आकार

145
दिया है या समसामयिक संबंधना और युगीन विचारों को क्या स्वरूप प्रदान किया है इसका विश्लेषण पात्रों के प्रस्तुतिकरण द्वारा किया जा रहा है। क्योंकि वर्मा जी ने प्रायः सभी नाटकों के कथानक को किसी न किसी रूप में परम्परा से जोड़ा है और अपने समय का विश्लेषण करने के लिए पात्र रचना में दोनों का मिश्रण प्रणाली नाटक को दर्शक के लिए प्रस्तुत किया है।

सुरेखा

सुरेन्द्र वर्मा के नाटक ‘दोपदी’ की मुख्य नायिका या पात्रा सुरेखा है। सुरेखा में हमें नारी के परम्परागत व आधुनिक दोनों रूपों के दर्शन होते हैं। इसलिए उसके स्वरूप के विषय में एक सीधी रेखा खींचना असम्भव है। वस्तुतः वह एक उद्भवभाववृत्त्वाय व्यवहारिक नारी का प्रतिनिधित्व करती है। जिसके कारण वह परिस्थितियों व समयानुसार परम्परागत व आधुनिक परिवेश में ठहरती जाती है। इसका परिचय हमें तब मिलता है जब वह स्वयं अपना परिचय देती है – “सिलाई–कढ़ाई में मैं बहुत कुशल हूं। समय मेरा काटे नहीं कटता था, इसलिए प्रारंभ तो हुआ था मन बहलाने को, पर धीरे–धीरे वही शीघ्र बनता गया। अब मेरे पास एक से एक सुन्दर नमूने हैं। इच्छा है कि कभी इनकी प्रदर्शनी करूँ और संस्कृति के विकास में अपना योगदान दूं।” उपर्युक्त वक्तव्य में सुरेखा के दोनों रूपों की झलक स्पष्ट दिखाई देती है।

नाटक के आरंभ में सुरेखा परम्परागत कुशल गृहिणी के रूप में सामने आती है। वह अपने घर के सभी कार्य कुशलता पूर्वक करती है और परिवार के सभी सदस्यों–पति, बेटी और बेटा के खाने–पीने का पूरा ध्यान रखती है। जैसे –

“सुरेखा : अलकास, नीसल | नाश्ता लग गया।
मनमोहन : अच्छा।”
सुरेखा : पहले क्या लोगे? टोस्ट, आमलेट या हलवा?

मनमोहन : कुछ भी

सुरेखा : चाय, काफी या दूध?

परम्परागत भारतीय नारी अपने पति के विरुद्ध कुछ भी बोलने का साहस नहीं कर पाती है। अन्यथा, अत्याचार और अपने प्रति उपेक्षा भाव होने के बावजूद कुछ भी आपत्ति न करना जैसे उसके स्वभाव में होता है। इतना ही नहीं पति के दूसरी स्त्रियों से शारीरिक संबंध होने पर भी चुपचाप सहते रहती है। प्रस्तुत नाटक में सुरेखा को इन सभी स्थितियों का सामना करना पड़ता है। उसके पति मनमोहन का रंजना, अजनना, वंदना नामक स्त्रियों से योग संबंध है। इन संबंधों की उसे जानकारी है जिसे वह अपनी सहेली मंडा को बातचीत में बताती है—

"सुरेखा : यही कि —जैसे अब वो आदमी एक नहीं, एक से ज्यादा है?

मंडा : (विचार मनन) एक नहीं, एक से ज्यादा है—।

सुरेखा : जैसे उसके हिस्से हो गये हैं अलग—अलग और कभी एक से तुम्हारा सामना होता है और कभी दूसरे से ... जैसे कभी वो दफ्तर में दूबा रहता है, कभी घर में, कभी ऊपर—ऊपर से मुझे छू के ही उसका मन भर जाता है और कभी वो एक—एक बोटी नींब डालता है मेरी।

मंडा : ऐसा तो मुझे भी लगता है अक्सर

सुरेखा : और कभी उसके बदन से दूसरी ओरत की बू आती है।"
मानदण्डों पर हम सुरेखा को रखते हैं तो वह इन पर खरी उतरती है । वह इतनी आधुनिक हो गई है कि अपनी बेटी से योन संबंधों पर चर्चा करती है । माँ होने के नाते वह अपनी बेटी के विषय में सम्पूर्ण जानकारी रखना अपना कर्तव्य समझती है । इसी कारण वह अलका से उसके प्रेमी से संबंधों के विषय में पूछते हुए किसी भी प्रकार की झिल्लियाँ या संकोच महसूस नहीं करती । वह अलका से पूछती है । "बात कहां तक पहुंची?... कुछ शादी-वादी की बात की उसने?" । इससे भी बढ़कर वह अपनी बेटी को इन सब मामलों में निपुण करना चाहती है । वह समझती है कि अलका नासमझ है । उसे भले बुरे की पहचान नहीं है । अतः वह अलका को समझाती है जब अलका बताती है कि उसका प्रेमी पढ़ाई करना चाहता है ।

"सुरेखा : क्या रखा है इतनी पढ़ाई में? — घर का इतना बड़ा काम है, वहीं क्यों नहीं संभालता? और एक बार साथ छूट गया, तो फिर बहुत मुश्किल होता है। — उसे कोई और मिल जायेगा।

अलका : तो क्या मुझे नहीं मिल सकता?

सुरेखा : लेकिन फिर उसको इतनी छूट देने का क्या फायदा हुआ? तुझे पसंद है, हर लिहाज से वो अच्छा भी है, तो फिर क्यों फिजूल में मीरा छोड़ा जाये? — तू एक बार इस्तेमाल करके देख न... लड़की को एक घर चाहिए। अगर उसमें सारी सहूलियत भी मिल रही हो तो इससे अच्छा और क्या हो सकता है?... ढंग से जरा मामलों को आगे बढ़ाने की जरूरत है।... ढोड़ी देल चौंद—सितारों की बातें करके, उसे जज्बाती बनाकर... राजी—खुशी देती जा उसे जो कुछ वो चाहता है।" ।

सुरेखा समाज में बदलते सामाजिक मूल्यों को पहचानती है, वह जानती है कि समाज में कौन सी और कैसी हवा बह रही है इसीलिए वह अलका को सावधान कर देना चाहती है।
वह अपनी पुत्री को समझाती है कि वह अपने प्रेमी का साथ न छोड़े जिससे कि आगे चलकर
शादी हो सके। इसके लिए वह अलका को उसके प्रेमी का आकर्षण बनाये रखने के दावे—पंच
भी सिखाती है।

सुरैखा अपनी बेटी अलका के प्रत्येक कार्य पर पैनी दृष्टि रखती है। वह अलका को
यौन संबंधों से पूरी तरह साक्षात करती है। बेटी के साही में बाहर से लौटने तथा उसकी
हालत को भांप कर सुरैखा पूछती है—“परसों शाम को साही पहनकर कहाँ गयी थी?... और
ऐसी तू कभी कहाँ बांधती है।... और जब आयी थी तो कैसी मस्ती हुई—पता है, ये तेरा हफ्ता
लेक नहीं है”?
° पत्नी के रूप में परम्परा का निर्वाह करती हुई भी गाँ के रूप में अपने दाखिल
को समझती है। रफ्तारः वह परम्परावादी और आधुनिक दोनों नारियों का प्रतिनिधित्व करती
है। रफ्तार: वह परम्परावादी और आधुनिक दोनों नारियों का प्रतिनिधित्व करती
है। परम्परागत नारी के रूप में जहाँ वह घर—परिवार, पति और बच्चों का ध्यान रखती है और
अपने पति के विवाहकर्म यौन संबंधों का भी विरोध नहीं कर पाती, वही वह सजग, भौतिकवादी
और वस्तुवादी वृद्धिकोण के कारण आधुनिक नारी के रूप में सामने आती है। वह जीवन में
आवश्यकतानुसार यौन संबंधों को अनैतिक नहीं मानती। वह समाज के उस विशिष्ट वर्ग से
संबंध रखती है जहाँ विवाह पूर्व यौन संबंध या विवाहेतर यौन संबंध सम्भव है।

मनमोहन

इसी नाटक का पात्र मनमोहन समकालीन महानगरीय सम्पत्ति के उस व्यक्ति का
प्रतिनिधित्व करता है जो दिखाई देता, अर्केला और तनावपूर्ण जिंदगी जीता है। वह पांच खिड़कियों
रूपों में हमारे सामने आता है। मनमोहन के रूप में वह सुरैखा का जाना पहचान पति है।
सुरैखा उसका परिचय इस प्रकार देती है।—मेरे एक पति है। नाम है उनका मनमोहन।
निकट के लोगों ने मनि कर दिया है। आप लोग भी चाहें तो कह सकते हैं यही—मुझे कोई
आपत्ति नहीं।”7 लेकिन मनमोहन के केवल इस परिचय पर दूसरे रूपों द्वारा आपत्ति की जाती है, क्योंकि मात्र यह ही मनमोहन का रूप नहीं इसके अतिरिक्त अन्य रूप भी हैं।

मनमोहन का सफ़द्र नक्काबवाला रूप सादगी, उच्चविवरण और उसके उज्ज्वल पक्ष का प्रतिनिधित्व करता है। वह मनमोहन को अपने संबंध के विषय में बताता है। “मैं तो हमेशा तुम्हारे साथ रहता हूँ।... तुम्हारा सब से पुराना साथी तो मैं ही हूँ। तुम्हारा सगा भाई। तुम्हारा सच्चा दोस्त।”8 वह मनमोहन की अन्तर्तिमा है। वह मनमोहन का मार्ग दर्शन करना चाहता है। वह उसे एक ‘पागल भीड़ की आवाज’ बनाने से बचाना चाहता है। मनमोहन के बुरे कर्मों में स्थित होने पर, कुकूटों के कारण उसे कष्ट होता है। सफ़द्र नक्काबवाली मनमोहन को सुधारना चाहता है। लेकिन उसके अन्य रूप इसका विरोध करते हैं। उसके सफ़दरनक्काब वाले रूप पर अल्पचार करते हैं, मारते—पीटते हैं। इस कारण यह नक्काब सफल नहीं हो पाता।

मनमोहन का पीला नक्काबवाली रूप उस महानगरीय भीतिक सम्पत्ति का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें आदमी भागता है। भागना—दौड़ना ही जैसे उसकी नियति बन जाती है। वह दूसरों से आगे निकलना चाहता है। वह चाहता है कि दौड़ में हमेशा अवलंब रहे जिससे कि वह महत्वपूर्ण, रोबर्डर पद पा सके। दौड़ के कारण वह सब कुछ पीछे छूट जाता है जिसके लिए वह दौड़ लगाता है, क्योंकि दिशा चुनने का अधिकार उसे नहीं होता उसे तो केवल दौड़ना था।—एक अंधी दौड़ में शामिल होकर।

मनमोहन का अन्य रूप एक कामुक, अनैतिक यौन संबंधों में लिखा, विवश नारियों की मजबूरी का फायदा उठाने वाला मनुष्य तथा सुरेखा के साथ विश्वासघाती पति के रूप में सामने आता है। लाल नक्काबवाली इस रूप को अब सुरेखा में ताजगी नहीं मिलती है। अब सुरेखा में वह नये पन का अहसास जो उसे पहले मिलता था नहीं रहा। इसीलिए वह ताजगी
और नयापन पाने के लिए और बासीपन को दूर करने के लिए सप्ताह में तीन-चार दिन ऑफिस के काम के बहाने घर से बाहर रहता है। इतना ही नहीं वह रथाई रूप से हर सप्ताह शनिवार को महीने की चार रातें घर के बाहर रंजना, अंजना और बंदना के साथ बिताता है।

इस प्रकार वह अपनी पत्नी सुरेखा के साथ विश्वासघात करता है।

मनमोहन का कालानक्राकाबरी रूप महत्वपूर्ण और खूब है। वह काली, विध्वंसक और राक्षसी प्रवृत्तियों का प्रतीक है। वह उसके उज्ज्वल पक्ष, सदुपपत्तियों, अच्छाईयों को कुचलकर कुष्ठियों में लिप्त रहता है। वह मनमोहन के सफ़ूफ़ नक्काबाले रूप पर अत्याचार करता है। योगाचार में लिप्त अपनी आदर्शों को छोड़ बाहर चलता है। तो वह उसका भी विरोध करता है।

वस्तुतः वह समाज में व्याप्त बुरे, अत्याचारी लोगों का प्रतिविप्लव करता है जो अत्याचार, शोषण, दमन तथा किर्मसात्तम कार्यवाहिकों में लिप्त रहते हैं। उसके जीवन में नियम-कानून, वर्जना, निषेध और प्रतिबंध का कोई महत्त्व नहीं है। इनके आदर्श पर जीवन नहीं जीता है। उसकी दृष्टि में जीवन को अर्थवत्ता देने के लिए इस सबका बहिष्कार करना और लोगों आदर्शयक है।

इस प्रकार मनमोहन आधुनिक शहरी वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जो भागती जिन्दगी के साथ सामजिक बीताने के लिए एक साथ कई स्तरों पर जीवन जीता है। आधुनिक शहरी मनुष्य खंड-खंड में ही पूर्ण है।

प्रवर्तन

इतिहास में प्रवर्तन वाकाटक नरेश है परन्तु इस के माध्यम से नाटककार ने आज की परिस्थितियों में समकालीन समस्याओं और प्रश्नों को उठाया है।

151
संवेदना के धरातल पर प्रवर्तन परम्परागत पुरुष है। वह यह सहन नहीं कर पाता कि उसकी माँ (प्रभावती) के अन्य पुरुष (राजकी साथियों) से संबंध रहे व्यक्ति प्रभावती उसकी माँ है जिसके साथ उसका पवित्रता का भाव जुड़ा है। इसलिए वह एक औसत पुत्र की बौद्ध प्रभावती को कहता है — "... तुमने वैवाहिक मर्यादा का उल्लंघन किया है। पति के होते परपुरुष की चाह!... परपुरुष... आया ही क्यों? ऐसी क्या विवशता थी?... क्यों न कोई ऐसा रास्ता खोज लिया कि पति ही सभी मानों में पति हो जाता।" 9

लेकिन जब वह प्रभावती से यौन संबंधों की चर्चा करता है तो इस बिन्दु पर आकर वह परम्परा का उल्लंघन करता हुआ दिखाई पड़ता है। वह अपनी माँ से प्रसन करता है —"... सन्तान, पति और पत्नी को सेतु की तरह जोड़ देती है लेकिन मेरे जन्म के बाद तो तुम दोनों के बीच की खाई और बढ़ गई होगी। मुझे देखते ही तुमको वे क्षण उसने लगते हों, जब उस रात तुम्हारे न चाहते हुए भी उस व्यक्ति ने तुम्हें छुआ था... उस अनुभव का विवरण, उस प्रक्रिया से निकलने की पीड़ा में निकलने का दाय जगाई होगी।..." 10

इतना ही नहीं वह अपनी माँ से अपने जन्म, अपने अस्तित्व के विषय में बात करता है।

वह प्रश्न भरी दृष्टि से कहता है और जब प्रभावती उसे बताती है कि वह उसमें अपने प्रेमी की झलक देखती है तो वह दूर जाता है: "इस जानकारी के बाद मेरा जीना कठिन नसला हो गया, ये कौन जानता है... मुझमें से जीवन की सारी सार्थकता निभाए ली है।" 11

लेकिन यहाँ आकर वह आधुनिकता से प्रभावित मनुष्य बन जाता है जब वह अपने अस्तित्व के प्रति जागरूक होता है। वास्तव में प्रवर्तन की समस्या आधुनिक मानव की समस्या है जो अस्तित्व संकेत से ग्रस्त है। माँ प्रभावती की यह स्वीकृति इसे विवशता में बदल देती है और इस संकेत को और अधिक गहरा देती है — "मुझे विवशता होती, अगर तुम अपने पिता का
प्रतिरूप होते... लेकिन तुम नहीं हो... तुम्हारा स्वरूप, तुम्हारा व्यक्तित्व, तुम्हारा व्यवहार हर पल, हर क्षण उस व्यक्ति की याद दिलाता है जो... तुम्हें मैंने अपने उस स्वभाव को पाया है, जिसे कभी कामनापरी, मासूम आँखों से देखा था।" 12 तो उसे अपने जीवन की सार्थकता, उपलब्धि पर सन्देह होने लगता है और स्वयं से प्रश्न करता है कि " मैं क्या हूँ? मैंने क्या किया?... अगर कालिदास की स्वीकृति भी सच्ची नहीं है, तब फिर मैं भी अपने पिता की तरह एक औसत व्यक्ति हूँ।... अधिकतर सेतुओं के समान मेरा सेतु भी आधा या चौथाई या तिहाई है – कीचड़ और काई सना... पॉन और जंग लगा... भग... जर्रर... कंकालबत।" 13

प्रभावति

प्रभावति ‘सेतुबंध’ नाटक की आधुनिक रचना है। वह सच्चाई का वर्ण करती है।

"प्रभावति के सोच-सिद्धांत पर सर्वथा आधुनिक हो जाती है जहाँ वह अपने पुत्र के समक्ष न केवल अपना आत्मवर्ण ही स्थीर अर्थ प्रतिक्रियाओं पर प्रश्न करती है प्रत्युस्तिक्रियाओं पर प्रस्तुत रूप से। 14 मैं हूँ लेकिन स्वतंत्र भी हो पूर्व । क्योंकि मैं हूँ, इसलिए स्वतंत्र होने का अधिकार... नहीं, ...कौन समझा कि मेरी भावना आज तक कभी है... मैं मैं बनी हूँ लेकिन पत्नी नहीं। 15 जो परम्परागत शब्दों को छोड़ दो। क्या कोई स्थिति ऐसी नहीं हो सकती, जिसमें परिपुर्ण परिवर्तन बन बन जाए और पति परिपुर्ण" 16 प्रभावति का ये कथन परम्परागत भारतीय नारी की दृष्टि से मान्य नहीं हो सकते लेकिन परिवर्तित नैतिकता के दृष्टिकोण से आधुनिकता-वोध के धरातल पर एक कठिन सत्य है और इसे असीमित नहीं किया जा सकता।

यद्यपि प्रभावति आधुनिक नारी है लेकिन अपने पिता के दबाव के कारण उसे अपने प्रेमी का त्याग करना पड़ता है। हालांकि वह पिता के दबाव में नहीं आती लेकिन जब पिता उसके मर्मभूत पर चौंक खड़े तो वह अंततः हार जाती है।
"बन्द्रगुत: आज जो आश्रयदाता उदार और कृपालु है, वह कल कठोर और दंडविधायक भी हो सकता है, क्योंकि प्रभावती चाहेंगी कि एक नवोदित कवि, जिसमें विलक्षण प्रतिभा है, जिसका यस्ता और जिसकी कीर्ति दिग्दिगंतर में पूजा सकती है, कारागार की किसी अंधेरी कोठरी में ऐडिया रंग—रंग कर मरे?... केवल इसीलिए कि प्रेम अंधा था। उसने अपनी बोनी बौंहों में आकाश को बौंध लेना चाहा था।"  

इस कठोर धमकी के बाद वह पिता की इच्छानुसार विवाह के लिए तैयार हो जाती है।

प्रभावती एक सच्ची प्रेमिका है। उसके प्रेमिका रूप में हमें परम्परा के लक्षण दिखाई देते हैं। एक प्रेमिका अपने प्रेमी को पाने के लिए जिस प्रकार का आचरण—व्यवहार करती है उसके दर्शन हमें प्रभावती में मिलते हैं। प्रभावती अपने प्रेमी के लिए प्रत रखती है—

"प्रभावती: सालों पहले त्रयोदशी का वह दिन... मैंने प्रत रखा था, फूल चुने थे, अंदीरा का तिलक लगाया था और लाखास से भोज पत्र पर अपने मन माये कर का चित्र बनाकर... पुष्पधन्य को समर्पित कर दिया था।"  

इतना ही नहीं वह शादी के बाद भी अपने प्रेमी (कालिदास) को भूला नहीं पाती और वाकाटक नरेश को मन से पति के रूप में स्वीकार नहीं करती। वह अपने पुत्र में भी पति की अपेक्षा अपने प्रेमी की झलक देखती है और जीवन की सार्थकता पाती है क्योंकि उसका पति एक औसत आदमी था। इसका आधार स्वयं प्रवर्तन को भी है—"बचपन के कच्चे दिनों से बहुत कुछ देखता आ रहा हूँ। मन पर कितनी ही छवियाँ अंकित हैं... कितने पर्यवेक्षण... कितने अनुभव खण्ड... उन सबको जोड़कर मैं का जो चित्र बनता है, वह बहुत ग्लान है, बहुत उदास... जैसे घने अंधकार की पृष्ठभूमि में सहस्रों दीपमालाओं से आलोकित विद्युत निर्जन
राजप्रासाद... जैसे तपती दोपहर में किसी प्यासे चालक की कातर पुकार... जैसे दो निर्दोष ऑखों की निरंतर अनुश्रुति...।” ।

कालिदास द्वारा भेंट की गई मेघदूत की पांडुलिपि उसके जीव का सहारा बन जाती है। वह उसके सम्बन्ध कर रखती है। क्योंकि प्रेमी के साथ जीवे गये क्षण उस मेघदूत की पांडुलिपि में अंकित है। वह विषय को पांडुलिपि के सहारे भूला देती है।

इस प्रकार प्रभावती अपने जीवन में आये अनेक मोड़ों,घटनाओं के कारण एक विचित्र सी स्थिति में जीती है। वह ऊपर से नो छांट दिखाई देती है। मगर भीतर से मानसिक उद्घाटन से पीड़ित रहती है। पुत्र व्यक्तन टिप्पणी करते हैं – “कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं, जिनके बाहरी रूप से कुछ मालूम नहीं पड़ता कि उनके अन्दर कौन रक्तपात है। सांसारिक धरातल पर वे सब ऊसी दंग से करते हैं। जैसे एक औसत आदमी करता है। लेकिन भीतर ही भीतर वे एक समानान्तर जीवन जीते हैं। लेकिन कभी किसी असाधारण क्षण में उसकी एकाध झलक दिखाई पड़ जाती है...।”

वास्तव में ‘कुछ व्यक्ति’ कोई और नहीं प्रभावती ही है। वह अपने प्रेम में असफल रहने के कारण अन्दर से टूट जाती है। लेकिन वह इसे अपने बाहरी रूप और व्यवहार से प्रकट नहीं होने देती।

चन्द्रगुप्त

‘सेतुबंध’ नाटक में नाटककार ने चन्द्रगुप्त के माध्यम से समकालीन राजनीतिज्ञों के चरित्र पर प्रकाश डाला है। आज के राजनेता अपने हर कार्य, व्यवहार और संबंध में अपना लाभ देखते हैं। वे देखते हैं कि किस प्रकार सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत की जाए और
उसका विस्तार किया जाए । इसके लिए ये राजनेता अपना ईमान धर्म, अन्तर्भूमि और यहाँ तक कि अपने जीवन साथी और बच्चों तक की खुशियों की बलि चढ़ा देते हैं ।

चन्द्रगुप्त की पुत्री प्रभावली कालिदास से प्रेम करती है और उससे विवाह करना चाहती है लेकिन चन्द्रगुप्त प्रभावली के विवाह में 'अनेक प्रकार की अनेकानेक संभावनाएं' देखते हैं ।
इसीलिए प्रभावली के विवाह का प्रस्ताव वाकाटक नरेश के पास भेजते हैं —

"यह से दोहरे उद्देश्य पूरे होंगे— वाकाटक गुप्त सम्राट के प्रभाव क्षेत्र में आ जायेंगे और शक उनके अधिकार क्षेत्र में... मालवा, गुजरात और सीरापुर की बहुत उपजाऊ भूमि के हाथ में आ जाने से एक और तो शासन की समृद्धि बढ़ेगी और दूसरी और साम्राज्य की सीमाएं बंगाल की खाड़ी से अरब सागर तक निषेध कैल जायेगी ।... दिपियाजी पूरी होने के बाद एक देश में एक सम्राट का एकछत्र शासन होगा । जो समय, साधन और शक्ति आपसी युद्धों में बेकार जा रही है, जनकल्याण में लगेगी । शक्ति और सद्भावना के वितावरण में साहित्य और कला की उपलब्धियों गणन ढूंढ़े ध्वारियों को छो लेगी और सम्भवता और संस्कृति को गुप्त युग की अमूर्त्य देन सहस्त्रों शालिवादियों तक याद की जायेगी।"21

वास्तव में चन्द्रगुप्त महावांकांकी शासक हैं। वह यश और प्रसिद्धि का भूमा है। वह दूर—दूर तक प्रचार चाहता है। वह अपने नाम के साथ अनेक उपाधियों जोड़ना चाहता है जैसे—

"एकाधिकारी सत्ता का विशेषण— महाराजाधिराज... शक्ति का प्रतीक— सिंहविक्रम कलात्मक संस्कृति का सूचक — रूपावृत्ति... शक्कात्रप रुद्रसिंह का दमन करके— रुद्रदेवमन्बरां..."22

अपने राजनेतिक स्वाभाव के कारण वह दूसरों की जिन्दगी का सोदा करता है। दो प्रेमी हदयों को सदा—सदा के लिए अलग कर देता है। वह भावनाशून्य हो जाता है। उसके लिए
पूरे देश का एकछत्र समाट होने का यश अपनी पुत्री की जिन्दगी से, उसकी खुशियों से कहीं बढ़कर होता है। अपने उदेश्य की पूर्ति के लिए कभी वह पिता होने का आहसास करवाता है—

"प्रभावती गुरुतवंश की राजदुहारा है.... जिस कुल का रक्त उनकी नस्ल में दीड़ रहा है, उसे इतिहास के पन्नों में चिरस्थायी बनाने के लिए क्या उन्हें अपना हट नहीं छोड़ देना चाहिए?...."23 कभी नैतिक कर्त्तव्यों की दुहाई देते हैं और जब इन सब से उनके अपने उदेश्य की पूर्ति संभव नहीं लगती तो वह शासक के तेवर दिखाते हैं——"आज जो आश्रयदाता उदार और कृपालु है, वह कल कठोर और दण्ड विधायक भी हो सकता है।"24

अपने राजनैतिक स्वर्णों की पूर्ति के लिए कितने ही लोगों को जिन्दगी का सोडा किया जाता है। इतना ही नहीं जिनके सहारे (जनता) ये राजनेता अभियान प्रारंभ करते हैं जो उनकी योजनाओं के केन्द्र होते हैं, जिनके कारण ये शक्तिशाली बनते हैं, उनपर ही वज प्रहार करते हैं। उनका ही दमन करते हैं, शोषण करते हैं। उनको ये अपनी साधृंथवादी मनोवृति के कारण बलि चढ़ा देते हैं। राजनेता जनता को केवल एक निमित्त, उपादान, साधन और माध्यम भर समझते हैं। यह ही आज की राजनीति की दिशा हो गई है। इस दिशा में ही चन्द्रगुप्त जाते हैं। इस प्रकार चन्द्रगुप्त आज का राजनीतिज्ञ है जो अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर कुछ सोच ही नहीं पाता। वह राजनीतिज्ञों की परस्पर की एक कड़ी है। जो मानवीय धरातल पर कभी नहीं सोचते।

कपिलज

कपिलज ‘नायक खलनायक विद्वंदव’ नाटक का समकालीन मनुष्य है, जो परिस्थितियों के हाथों विवश है। वह अपनी इच्छा से नाटक में भूमिका चुनने के अधिकार से वंचित है। वह अभिनय को जीवन से जोड़ता है इसलिए जीवन में बदलाव चाहता है। वह
चाहता है कि उसे विदूषक की भूमिका से छुटकारा मिले। वह विदूषक की भूमिका करते-करते ठब गया है—“मेरी ठब एक कलासाधक की ठब है, जो मंच पर मिन-मिन पात्रों के माध्यम से जीवन को समझना चाहता है, आत्मावेषण और आत्माभिव्यक्ति करना चाहता है।” 25

वस्तुतः वह एक आधुनिक मनुष्य है जो अंधेरे में जीने और रुढ़ होने की अपेक्षा अपने को समझना चाहता है और इसके लिए रंगमंच को माध्यम बनाता है। वह स्थिर नहीं बल्कि अपने यथित्व का विकास चाहता है। जबकि विदूषक की एक ही भूमिका करते रहने से यथित्व का कुछ विकास नहीं होता—रेखा न ऊपर उठती है, नीचे गिरती है। जिस विन्दु से इसका आरम्भ होता है उसी विन्दु पर इसका अन्त हो जाता है। 26

वह विदूषक की परम्परागत भूमिका से बंध करनहीं रहना चाहता है। वह नदी के प्रवाहित पानी की तरह आगे बढ़ता हुआ विकसित—स्वस्थ रूप चाहता है न कि लालब के ठहरे हुए पानी की तरह स्थिर, अप्रवाहित और सीमित यथित्व। वह बताता है कि “इसकी भूमिका एक ऐसा मोड़ है जिसे मैंने सैकड़ों बार निगला है, लेकिन जो बार-बार मेरे सामने आ जाता है — वही रूप, वही आकार, वही गंध, वही स्वाद।... क्योंकि वे विलक्कुल स्थिर चरित्र है...।” 27

इसलिए कपिलजी विदूषक की भूमिका से विद्याह करता है लेकिन परिस्थितियों उसके विद्याह को दबा देती है। वास्तव में विद्याह दबता नहीं बल्कि मंद हो जाता है, उसकी धारा भोकरी हो जाती है। उसे कभी धर्म, कभी कला, कभी राज्य और कभी दण्ड का भय दिखाकर तथा कर्म, भाग्य और नियति बताकर कुमारभक्ति उसका “सादा उत्तरीय खीचकर रंगीन उत्तरीय
उसके कंधों पर डाल देता है। गले में माला और कानों में कुंडल पहना देता है, हाथ में मोदक दे देता है।”

कन्धल की इस स्थिति पर डॉ. चन्द्रशेखर टिपणी करते हैं – “इस बिन्दु पर समकालीन जीवन की त्रासदी गहराने लगती है। हम यह निर्णय भी नहीं कर पाते हैं कि यह कन्धल का बलिदान है या आत्मपराजय। पर यह पुनः दोनों के बीच रहने के लिए दाण्डित हुआ है।”

कुमार*महंत

‘नायक खलनायक विद्वृक्ष’ का ‘कुमार*महंत’ नालन्दा विश्वविद्यालय से स्नातक एक विद्वान पुरुष है लेकिन एक लघु समय तक बेरोजगार रहने के कारण उसका आत्मविश्वास डंगमगा जाता है तथा विवशता बश और आत्मपराजय की स्थिति में विद्वृक्ष के जीवन में रूढ़ हो जाता है। परिस्थितियों के आत्मपराजय में उसने आत्मसंस्करण खोज लिया। पराजय को ही अपनी उपलब्धि मान लिया। 

“नायक खलनायक विद्वृक्ष – ये एक ही व्यक्ति के तीन पक्ष हैं और परिस्थितियों के परिवर्तन से हर व्यक्ति में इनके दर्शन हो सकते हैं।”

X X X X X

“हम राजसिंहासन पर न सही, लेकिन उसके बिल्कुल पास हैं।” छत्र की छाया हमारे ऊपर भी है; नवंबर की घोड़ी सी हवा हमें भी लगती है।”

वस्तुतः वह एक परमपरावादी पुरुष के रूप में सामने आता है जो निर्यात या भाग्य के विश्वास करता है। वह स्वयं के परिस्थितियों के आगे समर्पित कर देता है – “वह केवल परिस्थितियों का दबाव है, जो किसी के भी व्यक्तित्व को अर्थात संबंधों के रूप को निर्धारित करता है।”

159
कुमार भट्ट दृढ़ निर्मायक व्यक्ति नहीं है और न ही वह भविष्य की कोई योजना बनाता है। वह स्वयं को भगवान के भरोसे छोड़ देता है। कपिलजल को समझाते हुए वह अपनी इस दृष्टि का परिचय देता है—”इच्छाएं जीवन की नियामक नहीं हैं कपिलजल! हमारे मन चाहे जीवन का मानचित्र पूर्व की ओर जाता है और वास्तविक जीवन परिचय की ओर!... तुम तो फिर भी सीमांशाली हो।”34

कुमार भट्ट का मानना है कि जीवन में उसे जो कुछ मिलता है उसमें उसका कोई योगदान नहीं होता। वह सब भगवान की कृपा और इच्छा से प्राप्त होता है इसलिए उसे भगवान के निर्णय व स्वयं पर संतोष है—”स्वयं को संतोष दो कि भूमिका चुनने का अधिकार हमारा नहीं और इतना ही क्या कम है कि हम मछुआ या दूत या कंचुकी नहीं हुए।”35

इस प्रकार वह घोर भावावादी, नियतिवादी और परमपरावादी व्यक्ति के रूप में हमारे सामने आता है। लेकिन नाटक में हमें उसके चरित्र के दूसरे पक्ष, आधुनिक पक्ष का भी संकेत मिलता है। जब वह कपिलजल को कहता है। वह कपिलजल के सामने अपनी मानसिक व्यथा व्यक्त करता है—”तुम तो फिर भी सीमान्याती हो, जो इस झूठ का साक्षात्कार केवल रंगमंच पर करते हो। मुझे क्या कहते हो जो आठो पहर इस झूठ के विषय में पीं।”36

इस प्रकार वह आत्मरीक हृदय और तनाव को व्यक्त करके मनोवैज्ञानिक व्यथार्थ को अभिव्यक्ति देता है और उसमें व्याप्त आधुनिकता—बोध का परिचय मिलता है। अतः स्पष्ट है कि हमें कुमार भट्ट के चरित्र में परम्परा और आधुनिकता—बोध दोनों का ताना बाना मिलता है।

इस दृष्टि से नाटककार सफल रहा है।
शीलवती

‘सूर्य की अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक’ नाटक की नायिका शीलवती
निर्धन परिवार की कन्या है, जिसमें वह हमेशा अभाव का जीवन जीती है। स्वयं शीलवती के
शब्दों में— “इतना बड़ा परिवार और मिति की सीमित आय... अभाव... बंधन... दरिद्रता... दुःख...
न पाने की कुदरत... न होने की कड़ीवाहत... न मुरक्कामे की कर्षित... न हेतुने की घुटन...
दूसरी के प्रति आक्रोश, अपने के लिए क्रोध, स्वयं से घृणा... मुझे विलक्त प्रारम्भ से ही
निर्मित रूप से ये सब मिल रहा था — कुछ चौथाई तोला, कुछ आधा मासा, कुछ एक रती...”37

आर्थिक अभाव, दरिद्रता और घुटन का जीवन जीने वाली शीलवती की इच्छा
ऐसवर्षपूर्ण जीवन जीने की होती है। इसी इच्छा के कारण वह अपने प्रेमी प्रतोष का त्याग
करने नयुक्त ओककाक से विवाह कर लेती है। जहाँ उसे सभी मानिक वस्तुओं की उपलब्धि
होती है। “यहाँ इच्छाओं का अंत था, लेकिन साधनों का नहीं। यहाँ अभिलाषाओं की सीमा थी,
पर सम्पत्ति की नहीं।”38

शीलवती का पति ओककाक नयुक्त है लेकिन वह अपने पति के प्रति एकनिष्ठ है।
पति के शारीरिक रूप से असमृद्ध होने पर भी वह परिस्थितियों से समझौता कर लेती है। वह
ओककाक को जैसे भी जिस रूप में वे स्वीकार करती है, “जीवन के इस रूप को अपना लिया
था... (तुरंत अपना लिया है) और कभी नहीं सोचा था कि... ऐसी बात भी हो सकती है... वर्ष पर
वर्ष बीतते गये, ऋतुएँ पर ऋतुएँ... और स्वीकार की लकीर और गहरी होती गयी।”39

लेकिन अमात्यपरिषद का निर्णय परम्परागत भारतीय नारी शीलवती को अन्दर से तोड़
देता है। अमात्यपरिषद राज्य को उल्लंघिकारी देने के लिए शीलवती से नियोग प्रथम द्वारा
‘धर्मन्नरी’ बनने का अनुमोदन करती है। पतिब्रता शीलवती इसे वेश्यावृत्ति के समान समझती है।
लेकिन शक्तिशाली अमात्यपरिषद कभी राज्य के नाम पर तो कभी परम्परा का सहारा लेकर शिल्लवती को 'धर्मनर्तक' बनाने के लिए राजी कर लेती है— "यह पर उतना क्रान्तिकारी नहीं है जितना आप समझ रहे हैं। आजकल भी नियोग की प्रथा है। दो वर्ष पहले कुड़ड़नपुर और तीन वर्ष पहले अवती राज्य में इसी प्रकार उत्तराधिकारी प्राप्त किया गया है।... इतिहास साक्षी है कि... एक-एक पाण्डव का जन्म नियोग के द्वारा ही हुआ था। उनमें से कोई भी अपने पिता की सन्तान नहीं था।" 40 अब शिल्लवती सारे संस्कारों के जाल छिन्न—भिन्न करके मूल्यों और मर्यादाओं को तोड़कर, अपना पूरा मनोबल इकट्ठा करके नियोग के लिए प्रतीक के पास जाती है। तो उसके अंदर की नारी बड़क उद्दती है। शिल्लवती एक रात में ही रतिजन्य उन्माद, चापाल्य, हर्ष, आभें वायु, उष्ण, आंधिय और रोमांच आदि मनोवैज्ञानिक संवेदनाओं की अनुभूति कर लेती है।... "इतना सुख, इतनी सिहरन, इतना रोमांच... कितनी बड़ी क्रांति हुई है। मेरे जीवन में... मेरे तन मन का इतिहास ही बदल गया है।" 41

वह परम्परागत नारी शिल्लवती अब अद्वैतवादिन में तबदील हो जाती है। अपने प्रेमी प्रतीक के साथ रतिज संबंध बनाने के बाद शिल्लवती के दृष्टिकोण में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन होता है। धर्मनर्तक के रूप में "वह एक संशय बनकर आई थी परंतु एक ही रात्रि में एक संकल्प बनकर लोटती है। वह एक पराजयपूर्ण आत्मवीकृतियों की परंतु एक क्रान्तिमय इतिहास बन जाती है। न केवल पति प्रत् पृत्य संपूर्ण परिषद से वह अपनी व्यर्थता का उत्तर चाहती है। वह जूठी मर्यादा और निष्पादन परम्परा को विराजित होने से इन्कार करती है। उसकी यह प्रश्न मुद्रा उसे सर्वाधिक आद्वैतवादिन बनाती है।" 42

शिल्लवती मर्यादा ढोना और ओड़ना नहीं चाहती। वह शारीरिक आवश्यकताओं को ही सबसे अधिक महत्व देती है। प्रतीक के साथ रात बिताने के पहले अवसर पर वह गर्म—निरोधक गोलियाँ खा लेती है जिससे कि सभी अवसरों का भरपूर उपयोग किया जा सके। अतः वह
अमात्यपरिषद की चाल से ही अमात्यपरिषद को पराजित कर देती है। और जब कोक्काक उसे मर्यादा के नाम पर रोकना चाहता है तो शीलवती कहती है कि "पांच वर्ष तक मर्यादा
निमाने में उतना संतोष नहीं मिला जितनी तृप्ति एक रात में मिली है।... बोलो... किसे मानू?...
किसको दूँ महत्" 43

यह है कि शीलवती अब मर्यादा के नाम पर अपनी शारीरिक आवश्यकताओं को
dबाना नहीं चाहती। शीलवती की प्रतिक्रिया से आधुनिक यथार्थ विश्वुद्ध रूप में हमारे सामने
आता है। "कितनी युद्धतियाँ हैं जो व्याह से पहले ही कुमारी नहीं रहती... और में व्याहता होकर
भी प्रह्मचारिणी थी... लेकिन कब तक?... में एक मामूली स्त्री हूँ। जब शरीर के माध्यम से
जीती हूँ तो शरीर की मांगों को कैसे नकार सकती हूँ।" 44

शीलवती परम्परा से विद्रोह करती है। परम्परागत बातों को उसका विद्रोही मानस
स्वीकार नहीं करता। वह यह स्वीकार नहीं कर पाती कि मातृत्व ही नारी को सार्थकता प्रदान
करता है। अब उसके लिए "नारीत्व की सार्थकता मातृत्व में नहीं है... है केवल पुरुष से
संयोग के सुख में... मातृत्व केवल एक गोष्ठ उत्पादन है जैसे दही से निकलता तो मक्खन है,
लेकिन तलछट में थोड़ी सी छाया भी बच जाती है।" 45

शीलवती अपनी सापेक्षता के अनुरूप ही निर्णय लेती है उसका अपना बिन्दु है।
सामाजिक प्रतिष्ठा का, शरीर के सुख का, शौचिक वैमंब का। उसे दिस्कारा है कि किसी भी एक
व्यविध में ये सब एक साथ उपलब्ध नहीं होंगे। अत: वह किसी भी वस्तु को स्वीकार-अस्वीकार
एक अपेक्षित अनुपात में ही करती है। पूर्णता एक स्थान पर उपलब्ध न होने पर यह उसे
बिन्दु-बिन्दु से लेती है और उसे अपने में सम्पूर्ण करती है। यह है उसका निर्णय। वह पति को
उसकी अस्वीकार नहीं करती। वह प्रतिष्ठा और वैमंब है। 46 "मेरी पूरी सहानुभूति है तुम्हारे साथ,
लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि... जब आत्म संतोष की अंधी दीड़ हो – व्यक्ति सुख की खोज... तो जीवन बहुत जटिल होता है, ओक्काक... और उसकी मांगें भी उतनी ही उलझी हैं।

पूर्ण के लिए एक से अधिक व्यक्ति चाहिए... किसी से एक स्थान, किसी से भौतिक सुविधाओं, किसी से भावना की... किसी से शरीर का सुख... "47 यहाँ आकर शीलवती अत्यधिक प्रतीत होती है। आलोचक मथेन गीतम शीलवती की इसी दृष्टि के कारण ही उसे 'आधे-अपूरे' की सावित्री की जीवन दृष्टि से जोड़ते हैं।

इस प्रकार निष्कर्ष: यह कहा जा सकता है कि शीलवती में परम्परागत भारतीय नारी व आधुनिक नारी 48 दोनोंरूप मिलते हैं, लेकिन उनके आधुनिक विद्रोही रूप के ज्यादा दर्शन होते हैं। आधुनिक नारी सभी क्षेत्रों में पुरुष के समान आगे बढ़ रही है। इसीलिए अपनी एक पहचान और अस्मिता के साथ जीना चाहती है। अगर उसे कहीं समझौता, करना भी पड़ता है तो उसमें उसकी अपनी शर्तें भी होती हैं। आज की नारी मर्यादा, संस्कार और परम्परा के नाम पर अपनी आवश्यकता, अपने सुख, अपनी अस्मिता अर्थात अपना सर्वस्व दूसरों के लिए बलिदान नहीं करना चाहती। यही विशेषताएं हम शीलवती में देखते हैं।

ओक्काक

इसी नाटक का पात्र ओक्काक पुरुषत्वहीन है। न उसमें कोई अर्थ है न वह अपनी भूमिका शीलवती में कोई अर्थ ही रोप पाता है। उसकी अनुपूर्वता उसे भी बंजर बना डालती है।

वह पूर्व ईमानदारी से जीना चाहता है। किसी क्षण को पकड़कर उसकी समस्तता पी जाना चाहता है। परंतु पी नहीं पाता है। अनाचार्य विभिन्न से अर्थ नहीं ले पाता है। उन्हें अभिप्राय नहीं दे पाता है। आशय पाने की प्रक्रिया में एक बिन्दु पर आकर वह रूक जाता है। अभिप्रायों को जोड़ नहीं पाता। 48 "मैं तपते होठों से उसके उभारों को चूमता... मेरी धड़कन बढ़ जाती... मेरी
सांस धोकनी की तरह चलने लगती, मेरे माथे पर स्वेद बिनु छलछला आते... मेरी देह की 
एक—एक नश खींचकर टूटने—टूटने को हो जाती कि अब? आगे? क्या होता है इसके आगे? मैं 
बार—बार पुछता... अपने रूढ़िर की गर्मी से, अपने योवन से, अपने पुरुषत्व से... और उत्तर के 
रूप में मेरी आँखों के आगे आ जाता — अंधकार, घना अंधकार, केवल अंधकार।"  

tokak परम्परागत सामंति पुरुष है। वह पुरुषवादी सोच से प्रसिद्ध है। एक सामंति 
पुरुषवादी सोच से प्रसिद्ध म्ना को केवल वस्तु के रूप में देखता है। वह नारी को केवल 
भोग्या समझता है। नारी उसके लिए उपकरण तथा साधन के अतिरिक्त और कुछ महत्व नहीं 
रखती। ओककाॅ भी शीलवती से उपकरण व औषधि के रूप में ही विवाह करता है ताकि 
उसकी शरीरिक नवुंसकता का उपचार हो सके।... पत्नी से अच्छा उपचार मेरे लिए दूसरा 
नहीं हो सकता... वह संगिनि बनकर अकेलापन दूर करेगी, मित्र बनकर काम काज में सम्मति 
देगी... माँ की ममता, भवन का स्नेह, प्रेयसी का प्रेम... हर कमी दूर होगी, सारे अभाव पूरे होंगे... 
खोया हुआ आत्मविश्वास मिलेगा और जब शैवा पर पहुंचेंगे, वह घड़ी आयेगी — जब कामना 
की पूरी उपभोक्ताओं के साथ नारीता पुरुषत्व का आहवान करेगा, तो उस भौतिकात्मक क्षण में अपने 
आप ही...  

ओककाॅ पुरुषत्वहीनता के कारण राज्य को उल्लंघिकारी देने के लिए 
अमात्यपरिषद के द्वारा में अपनी पत्नी शीलवती को 'धर्मनंदी' बनाने की आज्ञा तो दे देते हैं 
लेकिन चाहते हैं कि उनकी पत्नी केवल अमुक उद्देश्य के लिए ही 'धर्मनंदी' बने। वह 
'कामनंदी' का रूप धारण न करे। जब शीलवती अपनी शरीरिक आवश्यकताओं को नकार 
नहीं पाती और 'कामनंदी' बनती है तो वह कभी परम्परा और कभी मर्यादा को एक हथियार के 
रूप में प्रयोग करके उस पर अपना अंकुश लगाने का प्रयत्न करते हैं। स्वयं पुरुषत्वहीन होने 
के बावजूद वह परम्परागत पुरुषवादी मान्यता से ऊपर नहीं उठ पाता।
ओककोक शारीरिक रूप से ही नहीं बल्कि एक शासक के रूप में लाचार और कमजोर व्यक्ति है। उसका न तो अपनी अमात्यपरिषद पर नियंत्रण रहता है और न ही अमात्यपरिषद के निर्णय की अनदेखी कर सकता है। वह नहीं चाहते हुए भी पत्नी के ‘धर्मनन्दी’ बनने के ‘अमात्यपरिषद’ के निर्णय को टाल नहीं पाता है। वह अमात्यपरिषद का मोहरा बन जाता है।

ओककोक का चरित्र समकालीन राजनीतिज्ञों का प्रतिनिधित्व करता है। आज ऐसे राजनीतिज्ञों की भरमार है जो नौकरशाहों के दबाव में कार्य करते हैं और उनके मोहरे बनकर रह जाते हैं। जिस जनता के माध्यम से वे सत्ता तक पहुँचते हैं उनकी उपेक्षा करके वे इन मुद्दों भर नौकरशाहों के चंगूल में फंस जाते हैं और उनकी स्वार्थ सिद्धि करते हैं।

कालिदास (आठवाँ सर्ग)

‘आठवाँ सर्ग’ में नाटककार सुंदर वर्मा ने कालिदास को साहित्यिक परम्परा से लिया है परन्तु उसका मूर्तन आधुनिक धरातल पर हुआ है। वह आधुनिकता—बौद्ध से युक्त साहित्यकार है। जो किसी भी दबाव में आकर या लालच व अपनी रचना का स्वरूप नहीं बदलता। धर्माध्यक्ष, चन्द्रगुप्त तथा अन्य लोगों के रचनाओं के रूप में परिवर्तन के सुझाव को वह अस्वीकार कर देता है क्योंकि ऐसा करने से रचना में कलात्मक दोष आ जाता है – ‘’ सातवाँ सर्ग नायक और नायिका के ब्याह से समाप्त होता है और आठवाँ सर्ग की पहली पंक्ति में पुनः का प्रादुर्भाव हो जाएगा। बीच के नी महीने नवम्बर तक कहाँ रहे? कैसे रहे?... क्या रुपरेखा रही उनके जीवन की?... क्या उन्होंने एक—दूसरे में अपने स्वप्नों को पाया, जो योग्यता के आते ही देखे जाने लगते हैं? क्या उन्होंने तन और मन का यह सुख जाना, जो विवाह के बंधन को स्थाई बनाता है? क्या उन्होंने देने और पाने की उस प्रक्रिया को जिया, जिससे भावना की गहरी तृप्ति मिल जाती है?... कथा के इस बहुत ही महत्वपूर्ण मोड को छोड़ दूं?... ब्याह के एकदम बाद
पुत्रोतप्ति हो जाएगी, तो बीच की इस खाई को पाठक कैसे भरेगा? क्या यह कथा का कलात्मक दोष नहीं होगा? इससे काय्य के समग्र प्रभाव को ठेस नहीं पहुँचेगी?"51

कालिदास अपनी अभिव्यक्ति के प्रति सच्चा है इसलिए रचना को कलात्मक दोष से बचाता है। यद्यपि तनावप्रसा होकर वह समझौता करता है लेकिन एक सीमा तक ही।" कुमार समभव को मैं अपृश ही छोड़ दूंगा, आद्वे संग पर... आगे नहीं लिखेगा। इस रचना को एक प्रकार से भुला ही दूंगा। यह कभी जेरे घर से बाहर नहीं निकलेगी। किसी गोपी में इसका पाठ नहीं होगा। किसी तक इसकी प्रतिलिपि नहीं पहुँचेगी। इतने से लोग संतुष्ट हो जाएँगे? फिर तो किसी का आपत्ति नहीं होगी?... कई बार धर्म व्यत्य से तो हो जाता है।... समझौता दूंगा कि कुमार का जन्म समभव नहीं हुआ, गर्म में ही उसकी भत्ता हो गयी।... तारक जीवित है, तो रहे। मुझे क्या?"52 इसमें नाटककार कालिदास के माध्यम से आधुनिक लेखक के संघर्ष और स्वीकृति को अभिव्यक्ति देता है।

कालिदास "एक रचनाकार की रचना धर्मिता और उसके व्यक्तित्व, आहं, गौरव को प्रतिलिपि करता है। वह चन्द्रगुप्त के पराशर के भी रचनात्मक शैलीका कलाक, अपमानित समझौते का कलंक नहीं होता।"53 तीन वर्ष बाद 'अमितांश शाकुलत' की स्वर्ण जयंती के उपलक्ष्य में आयोजित सम्मान – समारोह के निमंत्रण को वह अश्रीकार कर सत्ता के साथ विराट हो जाता है। शासन द्वारा साहित्य को सत्ता के पीछे बनाने और सत्ता के दिन दादूर की निर्यातक टर्फ़-टर्फ़ की तरह आजीवन कुएँ में रहने की स्थिति तथा इसे ही वापसिक करने पर वह शासन को केंद्रीय रूप से ऐसा चेताता है।“जीवन के एक मोड़ पर सत्ता की सहायता की आवश्यकता थी... अब नहीं है।... (उहरकर) अब?... अगर शासन ने जैसे रचना पर यहाँ रोक लगायेगा, तो वह दूसरे राज्य में सपना सुर में सुनी जायेगी। मुझे बन्दीगृह में डाल देगा, तो संकीर्ण बुद्धि और कुटिल
ভূমি অথবা পৃথিবীর ক্ষেত্রে প্রকৃতি সম্পর্কে রাখা যে তুমি আমার মনে করাতে পারি। তুমি প্রকৃতি সম্পর্কে কিছু জানাতে পারি তা বলি যে তুমি প্রকৃতির সাথে মিলে প্রকৃতি সম্পর্কে রাখা যে তোমার মনে করাতে পারি।

১. প্রকৃতির সাথে মিলে প্রকৃতি সম্পর্কে রাখা যে তোমার মনে করাতে পারি।

২. প্রকৃতির সাথে মিলে প্রকৃতি সম্পর্কে রাখা যে তোমার মনে করাতে পারি।

৩. প্রকৃতির সাথে মিলে প্রকৃতি সম্পর্কে রাখা যে তোমার মনে করাতে পারি।

৪. প্রকৃতির সাথে মিলে প্রকৃতি সম্পর্কে রাখা যে তোমার মনে করাতে পারি।

৫. প্রকৃতির সাথে মিলে প্রকৃতি সম্পর্কে রাখা যে তোমার মনে করাতে পারি।

৬. প্রকৃতির সাথে মিলে প্রকৃতি সম্পর্কে রাখা যে তোমার মনে করাতে পারি।
वह अपनी सत्ता, शासन को बनाये रखने के लिए कालिदास पर सभी प्रकार से दबाव
बनाता है । वह कालिदास को कहता है कि— "(तीव्र स्वर में) कालिदास! जिस क्षण तुमने राजप्रसाद में पूंछ रखा था, समझोता हो चुका था और उसका परिणाम भी देख लो! आज
tुम्हारे पास क्या नहीं है? ... नाम! यश! संपदा! प्रमुख!... मत भूलो कि रचनात्मक प्रतिमा अपने आप में अपूर्ण है, क्योंकि रचना को प्रकाश में लाने के लिए, उसके प्रचार और प्रसार के लिए उसकी स्वीकृति और मान्यता के लिए कुछ माध्यमों की आवश्यकता होती है।... लेकिन अंगर कोई यह सोचे कि वह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर शांति और व्यवस्था भंग कर सकता है, शासन के स्थायित्व के लिए संकट बन सकता है; तो यह उसकी बड़ी भूमि होगी— इस भूमि का भूल्य उसे चुकाना होगा। ... यदि लोगों का आक्रोश बढ़ता गया तो हो सकता है कि भुजें तुम्हारी सुरक्षा के लिए इस बात का आदेश देना पड़े कि तुम्हें उत्तराधिकारी से निष्कासित कर
dिया जाए।।57

लेकिन चन्द्रगुप्त एक राजा के साथ—साथ एक मनुष्य भी है। वह मानवीय दृष्टिकोण से भी सोचता है। मानवीय धरातल पर रहकर ही वह कालिदास को दंड नहीं देता। उसे राज्य से निष्कासित नहीं करता। यदि आक्रोश उसका मानवीय व्यवहार उसे आधुनिक बना देता है। इसके लिए उसकी निम्न पंक्तियाँ और अन्तः मन से स्वीकारकर्ति भी उसे आधुनिक बनाती है। वह कालिदास के विषय में स्वीकार करता है—

"उसके साथ अन्याय हुआ है, यह बात समझ में आती है।।58

x x x x

"तुम्हारे समुख कभी-कभी अपने को अपराधी अनुभव करता हूँ।।59
प्रियंगुमंजरी

प्रियंगुमंजरी को नाटककार परम्परागत नारी के ढाँचे से बाहर नहीं निकाल पाते। वह पूर्ण रूप से मध्यकालीन नारी है जिसका अपना कोई स्वंतंत्र अस्तित्व नहीं है। प्रियंगुमंजरी एक आदर्शवादी, लज्जाशील पत्नी है जो बाहर के लोगों के साथ पुलमिल नहीं सकती। वह कालिदास को बताती है कि राजसमा में उसकी दशा किस प्रकार होती— "तुम सर्ग पात आर्यम् करोगे और लोगों के सामने... मैं वहीं बैठी रहूंगी। चुपचाप, सिर मुकाए... पलक उठाकर किसी और नहीं देख सबूंगी और हर पल, हर क्षण कथोटी रहेंगी यह बात कि तमाम आँखें मेरे ही ऊपर लगी हैं। मुझे ही देखते अनेक अपरों पर सूक्ष्म मुस्कान आ गयी है और मुझे ही लेकर अनेक दृष्टियों में गोपनीय संकेतों का आदान-प्रदान हुआ है।... हर श्लोक के बाद मैं अपने आप में ही सिमटती जाऊँगी, हर श्लोक के बाद मेरे माथे पर श्वेत-बिन्दु उभरते नजर आएँगे, हर श्लोक के बाद मेरे हृदय का स्पन्दन बढ़ता जाएगा... और जब तुम 'इति उमासुरतवर्णनामाश्च: सर्गः...' कहकर अन्तिम पृष्ठ नीचे रखोगे, तो मेरी यह दशा होगी कि बस, धरती फटे और मैं उसमें समा जाऊँगे..."। इसलिए यह अस्वस्थ होने का बहाना बनाकर राजमहन जाने से छुटकारा पा लेती है। 

पति कालिदास का सुख-दुःख ही उसका अपना सुख-दुःख है। कालिदास की सेवा-ध्यान ही उसका एकमात्र लक्ष्य है। सम्मान-समारोह के स्थगित होने पर वह कालिदास
के समान ही दुःखी होती है और जब कालिदास अपने भवन नहीं लौटते हैं तो वह चिंतित होती है और लोगों से पूछती है –

"प्रियंगु : (यज्ञ होकर) आर्य सीमित! वे बहुत कोमल हदय हैं। ... मेरे मन में न जाने कौन–कौन आरांकाएँ..."

कीतिमहत!

जब तुम राजमंडिर में थे, तब तुमने स्वामि को जाते हुए देखा था?" 61

और जब कालिदास लौटकर आते हैं तो वह भावुक हो जाती है –

प्रियंगु : कहाँ थे अब तक?... (बाहे थाम लेती है। उससे सत्ता जाती है।) मैं इतनी डर गयी थी..." 62

इतना ही नहीं नाटककार उसे अंधविश्वासी और अपशकुन तथा टोना–टोटा में विश्वास करने वाली परम्परागत नारी के रूप में दिखाते हैं। समान–समारोह से पहले रात देखे गये स्वन के विषय में प्रियंगु अनसूया और प्रियंगदा ये वार्तालाप करती है –

"प्रियंगु : आज क्या बात है?... एक के बाद एक अपशकुन होते जा रहे हैं। नीद ढूँढने से कुछ देर पहले बहुत बुरा स्वना देखा। उठी, तो सूर्य में कब्र का आमाक हुआ। (दिखलाते हुए) यह पुष्पमुद्ग तोड़ने पलमर को उठान में गयी, तो मृगाढ्या बाई और से निकला। लीटने लगी, तो बाहर पथ पर एक मैल–कुचैला साथ हाथ में मोरछल लिए दिखलाई पड़ा। भीतर आई तो अन्तःपुर के ऊपर कोई एक साथ कौं–कौं देर लगे।" 63

X X X X X  X X
"प्रातः काल से बायी ओर फडक रही है। राहु सूर्य पर झपटता सा मालूम होता है। दिशाओं में उल्कापात का प्रभ हो रहा है। लगता है कि धरती को कंपने वाली ओँधी आने का है।" 64

अतः वह एक परम्परागत नारी है। 'आदबों सर्ग' नाटक में सुरेन्द्रकी यह कमजोरी है।

अब्दुल्ला ख़ाँ

अब्दुल्ला ख़ाँ 'छोटे सैयद बड़े सैयद' नाटक का मुख्य पात्र है। वह दिलेला, चतुर, धर्म सहिष्णु, प्रजा की मलाई सोचने वाला तथा महत्वपूर्ण व्यक्ति है। उसने अपने मन में एक सपना पाल रखा था और "अब्दुल्ला ने जो कुछ किया वह एक नायाब सपना को पूरा कर दिखाने की कोशिश में किया। बाबर, अकबर, औरंगजेब, शाहजहाँ आदि के बाद एक भी ऐसा बादशाह नहीं हुआ जो पूरे देश को एक बनाए रखने और जनता की मलाई की बात गंगिता से सोचने की कोशिश करता। ताकें ताऊल एक फूटबार भर रह गया था। सत्तान्त और रिजाया के बीच का संपर्क सूक्ष्म टूट चुका था। बदशमी और बेनजामी से देश की हालत बदतर होती जा रही थी। सत्ता और जनता को छोड़कर पूरे देश में सूखावट स्थापित करने का एक सपना था। अब्दुल्ला के मन में क्योंकि उसे अपनी मिळी, अपने देश और देश की धरती से प्यार था।" 65

अब्दुल्ला को परम्परा की जानकारी है। इसीलिए वह अकबर, जहाँगीर की परम्परा से जुड़ता है। वह रोशन होना चाहता है। वह अकबर की परम्परा को अपनाकर और उसमें जुड़कर तवारीख में रोशन होना चाहता है। वह अकबर कालिन विकासमान परम्पराओं से बहुत कुछ सीखता हैं और उन परम्पराओं को मानवता के लिए तथा शासन के लिए बनाए रखना चाहता है। इस दृष्टिकोण से वह आधुनिक चरित्र है। इसलिए वह अकबर को सामने
रखकर, परम्परा की उपयोगिता जानकर ही अजीतसिंह की पुत्री इन्द्रकुंवर के विवाह का ढोला फर्सखसियर के लिए मांगता है। वह धर्म, सियासत और इन्द्रकुंवर के इस्लाम कुबुल करने के मामले में भी परम्परा का सहारा लेता है। फर्सखसीयर और मीरजमला के साथ बातचीत में यह स्पष्ट होता है -

"अब्दुल्ला ख़ोँ : हुकूमत में फैसले मेरी और आपकी जिम्मेदारी है, यह देखना हमारा काम है कि सियासत में मजहब की क्या जगह है।

फर्सखसीयर : सल्तनत मुगलिया में दोनों में कभी फर्क सही किया। बाबर से लेकर अकबर और फिर औरंगजेब...

अब्दुल्ला ख़ोँ : (बात काटकर) पिछले शाहहास अजीभ थे, उनका जाहो जलाल इतना बुलबुल था कि अपने मजहब को हुकूमत से जोड़ने हुए भी मुल्क की अक्सरियत को अपने साथ लिये रहे... लेकिन दीरे मौजूदा के हम बीवे, समनजफ़फ़...

अब्दुल्ला ख़ोँ : (तीनों को एकटक देखता है) और इन्द्रकुंवर को कलमा पढ़वाने की राय किसकी थी?

मीर जमला : ऐसा तो दस्तूर ही है।

अब्दुल्ला ख़ोँ : (आक्रोश से) जोधाबाई ने इस्लाम कुबूल किया था?"66

अब्दुल्ला ख़ोँ धर्म और सियासत को अलग रखता है और एक व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाता है। वह देरियाल को परिक्षीतियों के अनुसार एक धर्मनिरपेक्ष रास्ता अपनाता है। इस प्रकार वह एक ओर अशोक और अकबर की परम्परा को गतिशील बनाये रखता है तो दूसरी ओर देरियअल और परिक्षीतियों के अनुसार, समय सापेक्ष निर्णय लेकर
हुसैन अली

‘छोटे सैयद बड़े सैयद’ का दूसरा मुख्य पात्र हुसैन अपरिप्लव, अध्यात्मवाद, असहनशील, उपर तथा सियासी दावेदारों को न समझने वाला व्यक्ति है। अब्दुल्ला की अपेक्षा वह केवल वर्तमान में जीता है। वह दूरदर्शी भी नहीं है। "अब्दुल्ला का सपना टूटा या अधूरा रहा तो उसका कारण था उसका अपना भाई हुसैन अली। चाहे वह जैसे भी पैदा हुई हो या साजिशों के तहत पैदा की गयी हो, पर हुसैन के मन में भाई के मर्मबंध के प्रति स्पष्ट, उसकी महत्वाकांक्षा के प्रति अविश्वास और सिंहासन पर अपनी जकड़ के कारण खुद बादशाह बन जाने की महत्वाकांक्षा ने उसके व्यक्तिव्यक्तियों को मलिन बना दिया।" 68 वह अब्दुल्ला के प्रति अविश्वास और सन्देह का शिकार है तथा उस पर आरोप लगाता है —

“हुसैन अली : (आक्रोश से) मैं बहुत खामोश रहा हूँ।... दिल्ली आने के बाद अपने जुल्फिकार की हंगामी लेती हैं। यह जानते हुए भी कि वो बानों को बेहद पसंद थी। क्यों? क्योंकि वहाँ करोड़ों का खजाना छिपा हुआ था।

अब्दुल्ला खूँ : (शुष्क हो) तुम इन अफ़्राइवाहों में यकीन करते हैं?
हुसैन अली : (अपनी ही री में) नेकूसीयर की बगावत के बाद अकबराबाद की दौलत... दूसरों से छीने मंसोबो - ओहदे अपने वफादारों को देना...
हिन्दुओं के साथ सर जोड़कर सारे फ़र्सले खुद करना..."69

हुसैन शासन और सम्पत्ति में पूरी भागेदारी चाहता है। वह नाटक में नादानी व उदण्डतापूर्ण व्यवहार भी करता है। एक नौसिखिया की भौति शक्ति हाथ में आने पर वह किसी को कुछ नहीं समझता। वह राजा का भी अपमान करता है - "(दर्द से रफ़ीउद्दर्जात की ओर बढ़ते हुए) शहीद हिन्द का मर्बा अब नो हासिल करते हैं... (एक पर रफ़ीउद्दर्जात के आसन पर रखता है, साथ ही रफीउद्दर्जात आसन से नीचे गिर जाता है ।) जिनके सिर पर सुनहरे काम वाली इस मुबारक जूती का साया होता है।"70

वह देशकाल और परिस्थितियों का आकलन किये बिना शक्ति के बल पर सत्ता पर कार्यित होना चाहता है। वस्तुतः वह अधिकारवान व्यक्ति है जो हवा का रूख नहीं देखता है उस पर तो बस सत्ता हथयाने का एक जनून सवार है। वह अबदुल्ला ख़ान को कहता है "हमें ढाल की क्या जरूरत... हम क्यों न खुद...? ... और हमारा तो इस पर काबू है... बिल्कुल हाथ में आयी हुई हकूमत... (उल्लेखित हो) पहले भी ताकतवर फौजियों ने तख्त पर क़ब्ज़ा किया है।"71

इस प्रकार हुसैन अली एक ऐसे नौजवान के रूप में समने आता है जो अधिकारवान, अपरिवक्त तथा ताकत के नशों में घूम होकर अपने पतन का कारण बनता है। वस्तुतः हुसैन अली आधुनिक सत्तासीन लोगों के संबंधियों का प्रतिनिधित्व करता है।
'आदमी'

'आदमी', 'एक दूसरी एक' नाटक का प्रमुख पात्र है। वह 'क्यूपिड डिटेक्टिव एजेंसी' चलाता है। वह काम के प्रति समर्पित है इसीलिए लिए गए काम को बढ़ावी अंजाम देता है। लेकिन वह यौन संबंध तथा विवाह आदि से संबंधित चुनौतियों के कार्यों में विशेष रूप से लेता है। इसका प्रमुख कारण यह भी बताया जा सकता है कि वह स्वयं संतोष में लिप्त है।

उसके अनेक महिलाओं से यौन संबंध हैं। बीना, सपना, पायल, राजस्थानी सभी से वह 'कुंडलिनी' जाग्रत करवा चुका है। वह 'औरत' से पहली ही मुलाकात में यौन संबंध बनाना चाहता है। वह नारी को शारीरिक भोग्य वस्तु के आतिरिक्त और कुछ नहीं समझता। इसलिए यहाँ बात ही बात में वह औरत को कहता है कि "...बहुत दिनों से मेरी 'कुंडलिनी' जाग्रत नहीं हुई।... यह जो मेरी श्रीद की हद्दी शुरू होती है न नीचे से... यहाँ बीजक-बीजक सहला देने से मीठी-मीठी सिहरन होती है। सिहरन की छोटी-छोटी तरंगें दीर्घे-दीर्घे सुख की भरी-पूरी हिलोरों में बदलती हैं। और फिर रोम-रोम में परम आनन्द का सागर धर्मरात्रा है। एक और कुंडलिनी थोड़ी...चंचल है। बस, नारी स्पर्शियाँ बायाए इसे।" 72

वह निर्तिक ग्रीम और यौन भावनाओं की तुलना करने का प्रयास करता है। वह ग्रीम में किसी प्रकार के दायित्व, कर्त्तव्य, नैतिकता और संशक का विचार नहीं करना। वह निर्देश, संकोचहीन, तथा मर्यादाहीन ग्रीम और यौन चेतनाओं की प्राप्ति और अभिव्यक्ति करता है। वह किसी भी महिला मित्र के साथ आलिंगन—चुबूंद लेना और कामुक हास-विलास करना वैध मानता है तथा किसी भी प्रकार के विधि निषेधों की प्रवाह नहीं करता।

'आदमी' में आत्मविश्वास की कमी है। उसने कभी ग्रीम किया था लेकिन आत्मविश्वासहीनता के कारण वह ग्रीमिका को कभी कह न सका। इतना ही नहीं उसमें...
आत्मसंस्कृति की भी कमी है । वह यह भी स्वीकार करने से डरता है कि वह अमूक से प्रेम करता है जबकि उसके लिए अन्दर ही अन्दर तड़पता रहता है । उसकी स्मृति में खो जाता है ।

‘आदमी’ अकलेपन की समस्या से ग्रस्त है । पुराणी प्रेमिकाओं से उसका साथ छूट जाता है । क्योंकि सभी से यौन संबंध बनाने के बाद उसने विवाह से इनकार किया है । इसीलिए उनकी बदिदुआँ भी उसने चुनी और सही है । ‘औरत’ के साथ भी उसने वही दोहराया है इसलिये वह भी उसे बदिदुआ देती है— "(अतीत घृणा के ठंडे समतल स्वर में) मैं सुबह और शाम, दोपहर और रात — आठों पहर, हर घड़ी तुम्हें कोई सुंगी, पानी पी—पीकर काली गालियाँ दूंगी। तुम्हें पल भर के लिए भी चैन नसीब न हो, ... अपने इस आठ सी फुट के विवाह में तुम ऐडियों रंग—रंग कर मरो, महिलों तुम्हारी लाश यहाँ सड़की रहे, मीठों दूर तक लोग इस दर से भागने लगे कि कहीं तुम्हारी जहरीली हवा छू गयी, तो आने वाली पीढ़ियों को पल भर की खुशी भी नसीब नहीं हागी..." ।

वह निराश है । अफ़ला है । अकलेपन को दूर करने के लिए मद्यपान का सहारा लेता है तथा हिटलर की जीवनी पढ़ता है । वह मद्यपान से अकलेपन को दूर करने में अक्षम है क्योंकि वह डरता है अपने आप से, दूसरों से । वह ‘औरत’ को कहता है — "अगर तुम मुझे थोड़ा सा जानती हो और मैं जानता हूँ कि तुम मुझे जानती हो थोड़ा — तो तुम्हें यह समझने में मुश्किल नहीं होनी चाहिए कि मैं ... अभिशाप हूँ । न मैं खुशी पा सकता हूँ, न दे सकता हूँ । ... मैं अपने अकलेपन के किले में रो—रो कर जीने के लिए अभिशाप हूँ । मुझे बराबर यही दर सताता रहता है कि अगर कोई शायराना शक्तिशाली किले की किसी दरार से मेरे पास आयी, तो फिर उसी रास्ते बाहरी दुनिया का गर्दा— गुबार, शोरोगुल और जहरीली हवा भी आ सकती है, जो मुझे फीरोज या मनोज बना दे और उसे रीता या पूनम..." ।
स्पष्ट है कि आदमी जिस उच्चम्यम्वर्गीय वातावरण में जी रहा है, उससे डरता है,
भागता है। वह डरता है पश्चात्य सम्पत्ति और संस्कृति से प्रभावित जीवन से। वह डरता है,
उन संबंधों से जिनमें आत्मीयता न हो। इसीलिए वह अकेला है, संत्रस्त और खड़ित है।

‘औरत’

‘औरत’ आधुनिक पैशाचिक तथा नौकरी करने वाली रहनी है। वह ‘ट्रेवल्स एजेंसी’ में
कार्य करती है। उसके मन में स्वच्छंद योगाचारिता कूट-कूट कर भरी है। उसके मन में
स्वच्छंद प्रेम और योगनत्स इत्यादि बलवती है कि वह पहली ही मुलाकात में ‘आदमी’ से
अलिंगनबद्ध हो जाती है लेकिन वह बहस में कभी आलसन्मरण नहीं करती। बहस के क्षेत्र में
वह आलोचनावास से भरी आधुनिक नारी है।

पश्चात्य सम्पत्ति से प्रभावित है इसलिए पश्चात्य सम्पत्ति और संस्कृति में जो भी
बिखरता है वह उन सबसे प्रगत है। वह कूटित है, अलग-अलग है। शादी से पूर्व अनेक पुरुषों से
योगसंबंध बना चुकी है। उसका प्रेमी उसे तुकरा चुका है। पार्टियों में मदिरा पान करती है।
शाम को पुरुषों के साथ मदिरा पीना उसकी दिनचर्या का अंग है। नक्षदन्ताद्वय उच्चम्यम्वर्गीय
महिलाओं में मदिरा पान की प्रवृत्ति को विशेष रूप से ‘औरत’ के माध्यम से नाटककार ने
रेखांकित किया है।

‘आदमी’ के साथ परस्पर घनिष्ठता होने से ‘औरत’ को साहचर्यजन्य प्रेम हो जाता है।
इस प्रेम में उसकी आदमी के प्रति प्रगाढ्य आत्मीयता निर्मित होती है। एक-दूसरे के संपर्क में
निर्मल रहने की प्रवृत्ति बलवती होती है। साहचर्य में ही वह आदमी के साथ योन संबंध बनाती
है। अनेक बार उसने आदमी की ‘कुंडलिनी जाग्रत’ की है। इस कारण आदमी से इसकी
घनिष्ठता और भी अधिक बढ़ जाती है। अब वह उस पर साहचर्यजन्य प्रेम और हक जताती है।
“हों, समझती हूँ और हक जमाने का जो फर्ज है, वो भी समझती हूँ। कल के दिन तुम्हारी टॉफ दूट जाए, तो मैं छह महीने, छह साल और जरूरत पढ़े तो सारी जिन्दगी तुम्हें वहाँ रखकर तुम्हारी देखभाल कर सकती हूँ।”

अब वह ‘आदमी’ से पृथक रहने और जीवन व्यतीत करने की कल्पना तक नहीं करती है। क्योंकि जिन्दगी में उसे सुरक्षित होने के लिए, महफूज़ होने के लिए एक स्थाई पुरुष की जरूरत है। वह आदमी से कहती है — “मुझे बारिश में बहुत उदास लगता है ... (मुस्कान से) पर अभी नहीं ... (पास आती है। आदमी को छूटी है।) तुम पास हो न! (विराम! फिर छूटी है।) तुम पास हो—तुम्हारी सांसों का एहसास ... तो मैं किस तरह महफूज़ महसूस कर रही हूँ!... (कुछ ठहरकर) तुम न होते, तो मैं गुड़ी—गुड़ी होकर विस्तर में घुसी होती।”

और जब आदमी उससे विवाह करने से इनकार कर देता है तो उसका हड़दय दूट जाता है। वह आदमी के प्रति घृणा से भर जाती है। वह उसे कोसती है, गाली देती है। आदमी का इनकार, असहयोग तथा स्वकृतियता उसकी निराशा का कारण बनती है।

वस्तुतः समाज में पश्चिमी सम्बन्ध और संस्कृति से प्रभावित युवा पीढ़ी विवाह को पराधीनता ही नहीं अप्राकृतिक बंधन भी समझते हैं और मुक्त भोग के सिद्धांत में विवाह करते हैं। भोग में उन्हें कोई नीतिक बाधा नहीं है, इसे वे केवल देह की एक भूमि समझते हैं, किन्तु शीघ्र ही उन्हें अपने भीतर का खोबखोब आनंद होने लगता है और इसी रीति-रिहायष्ट, खोबखोब की ओर सुरेंद्र वर्मा ‘एक दूसरे एक’ नाटक के पात्रों के माध्यम से ध्यान दिलाना चाहते हैं।

कुमार

कुमार ‘शाकुतलाकी अंगूठी’ नाटक का प्रमुख पात्र है। प्रस्तुत नाटक में वह कालिदास कृत ‘अभिज्ञान शाकुतला’ के दुर्गत की भूमिका निभाता है। इस प्रकार वह एक पौराणिक
पुरुष है, लेकिन पौराणिक होते हुए स्वी नाटककार ने उसे वर्तमान जीवन संदर्भ में प्रस्तुत किया है। वस्तुतः कुमार का इन्द्र और प्रवृत्तियाँ ही आधुनिक युग के इन्द्र और प्रवृत्तियाँ हैं।

कुमार आधुनिक युग क है। आधुनिक युग की भौतिक ही वह अपने ‘कैरियर’ के प्रति जागरूक है। वह जी-जान से एक ‘नाटक ग्रुप’ का निमार्ण करता है लेकिन अपने भविष्य और कैरियर की उज्ज्वलता को देखते हुए न केवल नाटक ग्रुप को छोड़ता है बल्कि अपनी प्रमुख को भी सदा के लिए छोड़कर अमेरिका चला जाता है।

कुमार आधुनिक मनुष्य है लेकिन जब वह नियति और भाव में विश्वास करने लगता है तो उसके आधुनिक-बोध पर सन्देह होने लगता है। वह टाइगर को कहता है – "टाइगर, मेरे अजीज... अकेला होना और रोना यही मेरी नियति है।" 77 वह दुखों का कारण किस्मत और नियति का खेल बताता है। वह संघर्ष नहीं करता, परिस्थितियों से मुकाबला नहीं कर पाता तथा उनके सामने डटता नहीं है। आत्मसमर्पण कर देता है। वह अपनी असफलता को नियति पर थोप देता है।

कुमार अकेला है। उसकी जीवनचर्चा तथा स्थिति के विषय में नाटककार ने स्वयं उसके ही मुख से कहलावा है – "सुबह का निकला/आधी रात को लौटता है अकेला आदमी/कमरे में उसके बेहद अकेलेपन की गंध है।/ ताला खोलने से लेकर/बातिल की चीज़ों में बीच तक का बक्रा/... रोशनी होने पर कमरे का/ सब कुछ वही है/ भीसा ही / जैसा सुबह छोड़ा था/ अखबार, कमीज, चाय का प्याला।/कमरे और अपने भीतर का भूतहास सनाता तोड़ने के लिए / अकेला आदमी आपने आप से बात करता है/... चुमा है कमरे में अकेले घुसना/और मन मारे रहना/अपनी मजबूरियाँ और सपनों के साथ...।” 78 वह अकेलेपन को नियति और मजबूरी मान लेता है। वस्तुतः वह डरता है – परिवर्तन से, जिम्मेदारियों से। वह
अकलेपण से पृथ्वी करता है लेकिन उसको तोड़ने की कोशिश नहीं करता, शादी नहीं करता।

“कुमार में उन सबको याद करता हूँ जिनके नाम और चेहरे से मुझे धिन आती है... और अपने
अकलेपण से, जो खाल की तरह मेरे ऊपर मढ़ा हुआ है |... अपनी जिम्मेदारी का सवैया बदलने से
मैं बहुत दरकर हूँ।”

आज के युवक जिम्मेदारियों से भागते हैं। उन्हें विपरीत लिंगी साहचर्य आकर्षित करते
हैं। वे उनके साथ रहते हैं, यौन संबंध बनाते हैं लेकिन कोई जिम्मेदारी निभाना नहीं चाहते।
कुमार का मन भी रत्नी सहबास की ललक रखता है। वह कनक के साथ यौन संबंध बनाता है
लेकिन उससे विवाह नहीं करना चाहता, जबकि यह जानता है कि कनक अपने समाज में उसका
बच्चा पत्ता रहा है। कनक और कुमार की बातचीत से यह स्पष्ट होता है कि वह जिम्मेदारी से
भागने और शादी न करने के बहाने खोजता है।

“कुमार: मेरी नौकरी चलने बाले नहीं। |... मैं अपने गिरदारियों में इस तरह थक चुका हूँ
कि...।
कनक: मेरी नौकरी तो है। |... तुम अपने मन का काम करना, जब जैसे चाहो।
कुमार: अगर घर बनान्या तो जिम्मेदारी से कौसे बच सकता हूँ।।
कनक: मैं तुम्हारे ऊपर कोई जिम्मेदारी नहीं डाल रही।।
कुमार: मेरे आलंसम्मान की भी तो बात है। |... जरूरत है मुझे भी। | लेकिन उसकी
कीमत भी बहुत बढ़ी है।”

इस प्रकार अनेक बहाने बनाकर वह किसी भी प्रकार की जिम्मेदारी से छुटकारा पा
लेता है। वह कनक को अंगूठी लौट देता है और अमेरिका चला जाता है। नये तजुर्वें और नये

181
अहसास प्राप्त करने के लिये क्योंकि उसे नया चाहिए। कुछ भी नया... जरूरी नहीं कि वो
खुशी देने वाला ही हो... बस पहले से अलग...

‘कनक’

कुमार की भौति कनक भी ‘शाकुंतला की अंगूठी’ नाटक में कालिदास के ‘अभिज्ञान
शाकुंतल’ की शाकुंतला की भूमिका में आती है। परंतु लेखक उसे पौराणिक शाकुंतला के
स्थान पर आधुनिक शाकुंतला यानि कनक के रूप में प्रस्तुत करते हैं। कनक स्वच्छंद रूप से
जीवन यापन करती है तथा पारस्परिक वैशिष्ट्य मूल्यों के विरुद्ध जाकर प्रेम में विवाहपूर्वक अनेक
पुरुषों से यौन संबंध बनाती है। वह आर्थिक रूप से निर्भर, कामकाजी शहीदी गुनवती है जो
परम्परा से अलग हटकर शादी के विषय में स्वयं निर्णय लेती है। यह कनक और उसकी मां के
बीच बातचीत से स्पष्ट होता है जब उसकी मां कनक से शादी के लिए बात करती है तथा
कनक के इनकार करने पर कहती है—

" माँ : अब नहीं करेगी, तो कब करेगी?
कनक : पता नहीं!

माँ : चंपा और चमेली के तो एक-एक बच्चा भी हो गया।
कनक : मेरी तरफ से चार-चार हो जायें।

माँ : रामस्वरूप में तुम्हें कौन सी बुराई दिखाई देती है?
कनक : जिसमें बुराई दिखाई न दे, उससे शादी कर लो?

माँ : अच्छा कुन्दन के बारे में क्या राय है?
कनक : मुझे कुन्दन के बारे में राय बनाने के अलावा और भी काम हैं कुछ।

182
माँ : अच्छा, गोरी शंकर तो भला है।

कनक : (नाराज होकर) तो मैं क्या करूँ?

इस प्रकार वह अपने माता—बाप के दबाव में आकर शादी नहीं करती। वह अपनी पसंद—
नापसंद स्वच्छंद भाव से अभिव्यक्त करती है। उसकी दृष्टि में विवाह के लिए दोनों में कुछ
क़ॉमन होना जरूरी है। अन्यथा जीवन रूपी गाढी ज्यादा दौर तक नहीं चल पायेगी। शकुंतला
और दुःखन्त के विषय में वह कहती है—"लेकिन भीतरी लगाव के लिए दोनों में कुछ क़ॉमन
भी तो होना चाहिए। कहाँ हरिन के मूह के घाव से परेशान मासूम लड़की और कहाँ हिन्दुस्तान
की पेठीदी बागड़ोर थामने बाला राजा।"  

कनक किसी पर भी पूर्ण विश्वास नहीं करती। वह हमेशा आशंका और संदेह के घेरे
से घिरी रहती है। जीवन में ठोकर खा—खाकर वह परिपक्व हो चुकी है। 'शकुंतला की
अंगूठी' नाटक में शकुंतला की भूमिका में जैसे वह अपनी संवेदनाओं को वाणी देती है—

"कनक : में देख नहीं पा रही। कर्णफलों का पराग आंखों में पड़ गया है।

कुमार : कहो, तो मैं फूंक मारकर निकाल दूं।

कनक : बड़ी कृपा होगी। लेकिन मुझे आपका भरोसा नहीं।

कुमार : नहीं, ऐसा नहीं होगा। नया — नया सेवक स्वामी के आदेशों से आगे नहीं
जाता।

कनक : इस नर्मः से ही तो भरोसा नहीं हो रहा।"  

183
कनक प्रेम में धोखा खा चुकी है इसलिए उसे किसी पर विश्वास नहीं होता। वह कुमार को कहती भी है – “बात यह है कि एक बार विश्वास करके चोट खा चुकी हूँ मैं!” इसीलिए वह अब सावधान रहती है।

कनक स्वयं को भाग्य या नियंत्रण के भरोसे नहीं छोड़ती बल्कि यथार्थ का सामना करती है। वह संघर्ष करती है। तुरंत निर्णय लेना ही उसका स्वभाव है। नील के शादी से इनकार करने पर वह भाग्य के भरोसे नहीं बैठती तथा कुमार से संबंध बना लेती है। कुमार से शारीरिक संबंध बनाने के बाद गर्मवर्ती होने पर वह सामाजिक सुरक्षा और इजजत के लिए उससे शादी करना चाहती है परन्तु कुमार के भी शादी से इनकार करने पर वह तुरंत ही निर्णय लेती है तथा ‘ऑपरेशन’ करवा लेती है। वह कुमार से अपनी अग्रुद्ध वापस लेती है और सुदर्शन को पहना देती है। उसे अपने अंतीत पर न तो ग्लानि है और न ही परशाताप। वह यथार्थ के धरातल पर विश्वास करती है।

मिर्जा नौशा ग़ालिब

ग़ालिब के माध्यम से नाटककार ने एक रचनाकार की ‘निजी’, ‘समाजी’ तथा ‘सियासी’ समस्याओं तथा तनावों को अभिव्यक्ति दी है। नाटक के प्रथम पृष्ठ पर लिखा भी है -- “यह नाटक मिर्जा ग़ालिब के जीवन का ऐतिहासिक दस्तावेज नहीं है, बल्कि उनके माध्यम से प्रतीक रूप में किसी भी समसामयिक युग पूर्व के बहुविकल्प तनावों को समझने की कोशिश है, जो रचनाक्रम में परिपाटी तौड़ने वाले रचनाकार को ढोलने पड़ते हैं – अपने सहकर्मियों के बीच, समाज के बीच, परिवार के बीच और स्वयं अपने बीच।" 85

ग़ालिब परम्परा से अलग हटकर चलते हैं। वे शायरी के परामर्शिक ढंगों को तोड़कर अपनी बात हिस्सालू नयी शैली में रखते हैं।
"नहीं थी रोक कोई आशियाँ से आसमां तक न हो थ से बचाते किस तरह बिजली से अपना आशियाँ यारब" 86  

इस शर की सभी समकालीन शायर दादे चुके होते है लेकिन गालिब इसे नये ढंग से कहते हैं —

"नहीं थी आसमां से रोक जो शाखे—नशोमन तक
बाहर किस तरह बिजली से अपना आशियाँ यारब" 87  

गालिब का तर्क है कि बिजली ऊपर से नीचे गिरती है नीचे से ऊपर नहीं इसलिए

"पहले आसमां का जिक्र होना चाहिए जहाँ से गिरती है और फिर आशियाँ का जिस पर गिरती है। इसके अलावा इस शर के दोनों मिस्रों में आशियाँ लफज का इतरमाल हुआ है जो बेजा मालूम देता है। 88 इस प्रकार गालिब परस्पर से अलग हटकर चलते हैं उनके अन्य वाक्य भी उनके दृष्टिकोण को सिद्ध करते हैं— "कोई फनकार रिवाज को तोड़ता भी है। चूकि तमाम लफज होते हैं, फिर भी उनमें मानी के जरा—से किसी नामालूम साप का फर्क होता है। फनकार अपने इजिहार की खासियत के लिहाज से... और अपनी काबिलत के मुताबिक उनमें नए मानी पद्ध करता है। 89 इस प्रकार पुराने 'लफज' से 'नये मानी' पद्ध करना अर्थात परस्पर से नये की रूपी गालिब के आधुनिकता—बोध का परिचायक है।

गालिब का जीवन के प्रति दृष्टिकोण आधुनिक है। वह किसी सीमा में बंधन नहीं चाहते परन्तु उनके साथ विकल्प यह रही कि समाज में साहित्यकारों, आलोचकों और पत्नी ने कभी उन्हें समझने की कोशिश नहीं की और उन्हें बाहर और घर वापस आकर कभी शाति नहीं मिली। पत्नी उमर व के अपने शिक्षे-गिले थे। दोनों एक-दूसरे से दूर अलग—अलग सिरे पर जी रहे थे। 90 फलस्वरूप उनके जीवन में एकाकीपन और अकलापन घर कर गया।
उमराव

उमराव को नाटककार ने परंपरागत भारतीय नारी के रूप में चित्रित किया है। मुरलिम समाज के परंपरागत रीति-रिवाजों के अनुरूप ही उसका निकाह जान-पहचान की रिसेंटेडारी में हुआ है। इस प्रकार पुराने नैतिक नियमों और बंधनों में ही वह रच-बस गई।

उमराव जानती है कि गालिब के शायर से लगाव के कारण ही उसे अनेक दिक्कतें उठानी पड़ती हैं लेकिन कभी भी वह गालिब से शिकायत तो अलग इसके विषय में बात भी नहीं करती। यद्यपि अन्य यात्राओं तथा आपा के सामने वह कहती है— "इनकी तब्केशायरी की नींव इस क्रूर गहरी और उस पै तामीर की गयी खुदारी इतनी वुल्न्द है कि उसने शांकियात से बो तवाजुन हटा दिया जो इसन को सुधुनवरी के बालजाद़े खानादार बनाए रखता है... (कीकी हैसीं से) और इसकी सबसे ज्यादा सज्जा भुगतनी पड़ती है बेचारी बीची को।"71

लेकिन वह इतना साहस नहीं जुटा पाती कि वह सब गालिब को कह सके। वह गालिब के सामने गालिब की बुराई नहीं कर सकती। अतः अन्दर ही अन्दर वह टूटी— घुटनी रहती है। लेकिन अंत में पीड़ा और हदन्द से जुड़ती हुई वह आधुनिक महिला के समान निर्णय लेती है। गालिब द्वारा उसकी उपेक्षा करके प्रेमिक काव्यिक से मिलने जाने को उतारवला देखकर उमराव उन्हें चेतावनी दे देती है— "तो फिर यह भी जान लीजे कि आज आपने दलील अपने बाहर कदम रखता, तो हमारे बीच कोई चीज हमेशा के लिए टूट जाएगी।"72 और अंत में वह अपनी उपेक्षा सहन नहीं कर पाती तथा गालिब को घोड़कूर चली जाती है। इस प्रकार नाटक के प्रारंभ में नाटककार उमराव को परंपरागत नारी के रूप में लेकर चलते हैं लेकिन अंत में उसे आधुनिक नारी बना देते हैं। अतः हम उमराव के चरित्र में परंपरा और आधुनिकता—बोध दोनों ही विशेषताएं पाते हैं।
निश्चित रूप में कहा जा सकता है कि पात्रों में नाटककार ने परम्परा और आधुनिकता का समावेश करवाया है। एक ही पात्र में एक या दोनों विशेषताएं मिलती हैं। कहीं कहीं पात्रों में एक विशेषता की तरफ झुकाव ज्यादा है तो दूसरी की तरफ कम। वस्तुतः यह सब पात्रों के मनोविज्ञान, उनके परिवेश और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। मनोविज्ञान, परिवेश और परिस्थितियों के कारण ही इनके पात्रों की विशेषताएं साम्य-वैश्वय रखती हैं। 'दौप्यदी' नाटक की सुरेखा और 'सेतुबंध' की प्रभावती तथा 'आदमी सर्ग' की प्रियंगुमंजरी में थोड़ा साम्य-वैश्वय। सुरेखा, प्रभावती और प्रियंगुमंजरी गृहणी के रूप में परम्परागत नारीयों हैं।

लेकिन जब सुरेखा अपनी बेटी अलका से बात करती है तो उसका आधुनिक व्यक्तित्व भी सामने आता है। इसी प्रकार प्रभावती परम्परागत नारी के समान जीवन यापन कर रही होती है। लेकिन जब पुत्र प्रवर्षन उससे कालिदास से प्रेम संबंध के विषय में प्रश्न करता है तो वह सच्चाई का वरण करती है। आधुनिक समाज की सच्चाई तथा मूल्यों को स्वीकार करके पुत्री को उसी रूप में दालना सुरेखा को भी आधुनिक बनाता है लेकिन प्रियंगुमंजरी में यहूं वैश्वय मिलता है। वह शुरू से आखिरी तक एक परम्परागत नारी है। 'सूर्य' की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' की नायिका शीलवती भी शुरू में पति के नपुसक होने पर परिस्थितियों से समझौता करती है। एक परम्परागत नारी की दिनचर्या के समान ही उसकी दिनचर्या होती है। लेकिन जीवन में आये अथवा एक मोड़ के कारण वह परम्परागत नारी आधुनिक नारी में तबदील हो जाती है। अपने पुराने गद्दियों तथा प्राचीन शुद्ध स्वभाव का बाद उसके जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन होता है। अब वह अपने नपुसक पति के साथ जीवन की व्यर्थता का उत्तर चाहती है। वह अपनी पहचान, अस्मिता के प्रति संज्ञान होकर ही अपनी शरीर पर समझौता करती है। 'कौद—ए—हयात' नाटक की पात्रा उमराव शुरू में परम्परागत पत्नी के समान सब कुछ सहती है; घुटटी है, टूटटी है। लेकिन अंत में उसका निर्णय आधुनिकता-बोध
का परिचयक है। वह ग़ालिब द्वारा उसकी बात न मानने पर उसे छोड़कर चली जाती है।

'शकुन्तला' की अंगूठी' नाटक की कनक और 'एक दूरी एक' नाटक की औरत स्वच्छंदतापूर्ण जीवन यापन करती है। पाश्चात्य सयत्व और संस्कृति से प्रभावित 'औरत' के लिए विवाहपूर्व यौन संबंध न तो आत्मिक है और न ही उसे इन पर नज़र आता है। कनक भी इसी मानसिकता की युवती है। दोनों के अनेक पुरुषों से यौन संबंध रह चुके हैं। लेकिन अंत में वे इस जीवन से ऊब कर, धक कर, दूर कर विवाह करके स्थायी रूप से जीवन यापन करना चाहती हैं। थोड़े व्यापक स्वारात्म पर कनक और शुरुआत भी समान रूप से सब कुछ सहने के लिए विवश हैं।

उनकी घटना और परिस्थितियों में अंतर केवल इतना ही है जिसके सुरुआत विवाह के बाद अपने पति का विश्वासघात और घोटा सहती है जबकि कनक विवाह पूर्व अपने प्रेमी का।

पुरुष पात्रों में 'संतुवंद' का प्रवर्तन तथा 'सूर्य' की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' का औखकार दोनों सामन्त पुरुष हैं। प्रवर्तन यह स्वीकार नहीं कर पाता कि उसकी माँ की अलग जिन्दगी है अर्थात् मौक़ा प्रभावित की किसी पुरुष से प्रेम संबंध रहे। वह प्रभावित से कालिदास के साथ रहे प्रेम संबंधों पर प्रश्न करता है। वह अपनी माँ को समझने का प्रयास नहीं करता है। जिस तरह 'सूर्य' की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' का औखकार भी पुरुष करने के बावजूद वह तहत नहीं कर पाता कि उसकी पत्नी तेजीक, मनोवैज्ञानिक तथा शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अन्य पुरुष से संयोग करें।

यद्यपि वह पत्नी शीतलकृति की अमात्यपरिषद के दबाव में आकर 'धर्मनदी' मनोहर नाटक की साहबेटी के द्वारा देता है लेकिन पुरुषवर्तविद्वादी सोच से उबर नहीं पाता तथा अमात्यपरिषद को दंड देते हैं। दोनों ही कहानियाँ हैं। आज की भाग दोह में अपनी निज़ीती में दोह कर वे धक चुके हैं। वे व्यभिचारी हैं। दोनों ने अनेक टिप्पणियाँ दाए शारीरिक संबंध बनाये।
है। यद्यपि इसके समान ही 'शकुन्तला की अंगूठी' का कुमार भी व्यभिचारी, यौनाचारी, अकेला और संतत्रत है। लेकिन जब वह नियति, भाव्य में विश्वास करने लगता है तो जैसे परम्परागत भारतीय मनुष्य का प्रतिनिधि बन जाता है। कुमार घोर परम्परावादी पुरुष है जो अपनी हार को नियति मान लेता है। 'छोटे सैयद बड़े सैयद' का अदुल्ला ख़ान एक महत्वपूर्ण, व्यवहारिक तथा धर्मनिरपेक्ष अभिकारी है जो अकबर,ज़हांगीर की परम्परा से सीख लेकर तबाही में रोशन होना चाहता है। हुसैन अली अपरिप्व, उदार तथा आधुनिक राजनीतिज्ञों के सांबंधों का प्रतिनिधित्व करता है।

'नायक खलनायक विदूषक' का कंपिजल, 'आठवीं सर्क' का कालिदास और 'कैद--ए--हयात' के मिर्ज़ा ग़ालिब की सूचि नाटककार ने आधुनिकता-बोध के धरातल पर की है। कंपिजल एक कलाकार है और कला के माध्यम से अपने जीवन को अभिव्यक्ति देना और समझना चाहता है। यद्यपि वह इसमें असफल होता है लेकिन कालिदास और मिर्ज़ा ग़ालिब के चरित्र अपनी विशेषताओं के कारण गौरव को प्राप्त करते हैं। कालिदास अभिव्यक्ति स्कृतिय के सिये सत्ता की उपेक्षा करने साहित्यकार की गरिमा स्थापित करता है। इसी प्रकार मिर्ज़ा ग़ालिब भी व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक उलझनों और तनावों के सामने झुक कर नहीं है। कंपिजल, कालिदास और मिर्ज़ा ग़ालिब के माध्यम से नाटककार कलाकार और साहित्यकार के तनावों और संघर्षों को अभिव्यक्ति देता है।
1. तीन नाटक — चुरेन्द्र वर्मा, पृ. 89
2. यहीं, पृ. 92
3. यहीं, पृ. 128
4. यहीं, पृ. 100
5. यहीं, पृ. 100–101
6. यहीं, पृ. 102
7. यहीं, पृ. 90
8. यहीं, पृ. 130–131
9. यहीं, पृ. 29
10. यहीं, पृ. 36
11. यहीं, पृ. 37
12. यहीं, पृ. 36–37
13. यहीं, पृ. 40
14. समकालीन हिंदी नाटक: कथ्य चेतना — डॉ. चंद्रेश्वर, पृ. 294
15. तीन नाटक — चुरेन्द्र वर्मा, पृ. 35
16. यहीं, पृ. 29
17. यहीं, पृ. 33–34
18. यहीं, पृ. 29
19. यहीं, पृ. 18
20. यहीं, पृ. 17
21. यहीं, पृ. 32
22. यहीं, पृ. 31
23. यहीं, पृ. 32
24. यहीं, पृ. 33
25. यहीं, पृ. 66
26. यहीं, पृ. 65
27. यहीं, पृ. 64–65
28 वही, पृ.83
29 समकालीन हिंदी नाटक: कथ्य चेतना—डॉ. चन्द्रशेखर, पृ.293
30 वही, पृ.293
31 तीन नाटक—सुरेन्द्र वर्मा, पृ.81
32 वही, पृ.83
33 वही, पृ.82
34 वही, पृ.82
35 वही, पृ.83
36 वही, पृ.82
37 सूर्य की अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक—सुरेन्द्र वर्मा, पृ.290
38 वही, पृ.37
39 वही, पृ.26
40 वही, पृ.19
41 वही, पृ.41
42 समकालीन हिंदी नाटक: कथ्य चेतना—डॉ. चन्द्रशेखर, पृ.290
43 सूर्य की अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक—सुरेन्द्र वर्मा, पृ.42
44 वही, पृ.5
45 वही, पृ.52
46 वही, पृ.288
47 सूर्य की अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक—सुरेन्द्र वर्मा, पृ.55
48 समकालीन हिंदी नाटक: कथ्य चेतना—डॉ. चन्द्रशेखर, पृ.291
49 सूर्य की अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक—सुरेन्द्र वर्मा, पृ.43
50 वही, पृ.43
51 आठवीं सर्ग—सुरेन्द्र वर्मा, पृ.55—56
52 वही, पृ.58
53 समकालीन हिंदी नाटककार—गिरीश रस्तोगी, पृ.72—73
54 आठवीं सर्ग—सुरेन्द्र वर्मा, पृ.72
55 समकालीन हिंदी नाटक: कथ्य चेतना—डॉ. चन्द्रशेखर, पृ.295
56 आठवीं सर्ग—सुरेन्द्र वर्मा, पृ.53—54
86 वही, पृ.28
87 वही, पृ.29
88 वही, पृ.29
89 वही, पृ.27
90 समकालीन हिंदी नाटक — नरनारायण राय, पृ.128
91 कौद—ए—हयात — चुरेन्द्र वर्मा, पृ.17
92 वही, पृ.71